अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-40, अंक-10, 01-15 जनवरी, 2017

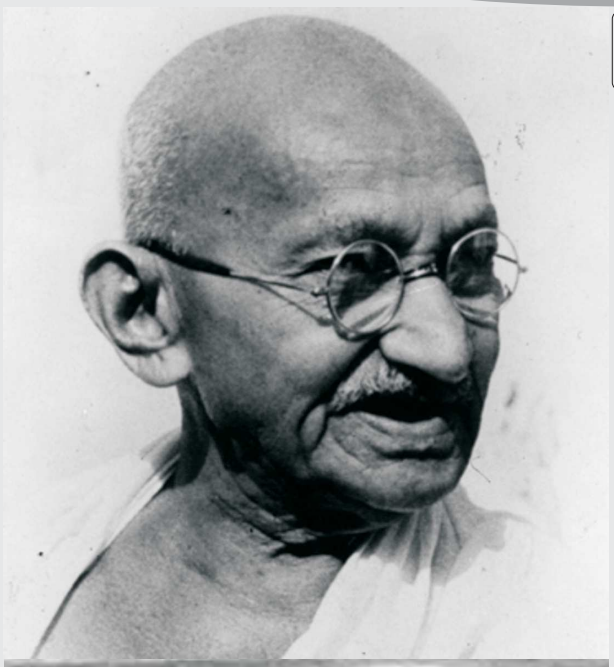

नववर्ष 2017 की हार्दिक शुभकामनाएं

कोई भी मानव-संस्था ऐसी नहीं है, जिसके अपने खतरे न हों। संस्था जितनी बड़ी होती है, उसके दुरुपयोग की सम्भावनाएं उतनी ही अधिक रहती हैं। लोकतंत्र एक महान संस्था है और इसलिए उसके दुरुपयोग की सम्भावनाएं उतनी ही अधिक हैं। इसलिए इलाज यही है कि दुरुपयोग की सम्भावना कम-से-कम कर दी जाए, यह नहीं कि लोकतंत्र ही न बनाये जाएं। - गांधी

ये भूमि हड़पने वाले - जेपी

गड़बड़ तभी होगी, जब आदमियों में काबिलियत न हो और बुनियादी शर्तें वह पूरी न करते हों। इसलिए गांधीवादी समाज के अंदर हर व्यक्ति को अपने विकास की पूरी-पूरी गुंजाइश मिलती है और साथ ही साथ गड़बड़ हो जाने का खतरा भी खत्म हो जाता है। - जे. सी. कुमारप्पा

अनुपम मिश्र जी को विनम्र श्रद्धांजलि!

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत
सत्य, अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक

वर्ष : 40, अंक : 10, 1-15 जनवरी, 2017

प्रधान संपादक
बिमल कुमार
मो. : 9235772595
संपादक
अशोक मोती
मो. : 9430517733

संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह भवानी शंकर 'कुसुम'

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ, साधना केन्द्र
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : ssprakashan.com

शुल्क

मूल्य	:	05 रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC No. UBIN-0538353
Union Bank of India
Rajghat, Varanasi

इस अंक में...

1. नीतियां और चुनौतियां... 2
2. लोकतंत्र के खतरे... 3
3. सर्वोदयी लोकतंत्र... 4
4. हिन्दू और मुसलमान... 5
5. गांधीवादी-अर्थनीति... 6
6. ये भूमि हड़पने वाले... 8
7. चला गया पानी का असली पहरेदार... 11
8. बड़े गौर से सुन रहा था जमाना... 13
9. तालाब कैसे बनायें?... 14
10. पानी पर संकीर्णवादी सोच... 16
11. गतिविधियां एवं समाचार... 18
12. मन लागो यार फकीरी में... 19
13. कविताएं... 20

संपादकीय

नीतियां और चुनौतियां

राष्ट्रीय स्तर पर सत्ता पक्ष एवं विपक्ष द्वारा जो तौर-तरीका अपनाया जा रहा है, उसका एक लक्ष्य उत्तर प्रदेश में और पंजाब में होने वाले चुनावों को भी प्रभावित करना है। पहले सेना द्वारा दुश्मनों के खिलाफ एक कार्रवाई (सर्जिकल स्ट्राइक) की गयी, तो उसे राजनीति का हिस्सा नहीं बनाया जाना चाहिए था। किन्तु सत्ता पक्ष द्वारा जब इसका राजनीतिक लाभ उठाने की कोशिश की गयी तथा इसका अति प्रचार किया गया तो इसका अपेक्षित प्रभाव नहीं पड़ा। पाकिस्तान के अंदर अतिवादी शक्तियों ने यह दबाव बढ़ाया कि ऐसा नहीं दिखना चाहिए कि बार्डर (या नियंत्रण रेखा) पर शांति हो गयी है या आतंकवादी घटनाओं में कमी आ गयी है। पाकिस्तान के अंदर अतिवादी शक्तियों का दबदबा बढ़ा। कम प्रचार से जो लाभ, सर्जिकल स्ट्राइक के बाद मिल सकता था, वह नहीं मिला। घुसपैठ की कोशिशों को नाकाम करने तथा आतंकवादियों की रीढ़ तोड़ने का कार्य, सेना की रूटीन कार्रवाई का हिस्सा बनाना होगा। और, ऐसी कार्रवाइयों को राजनीतिक प्रचार से दूर रखना होगा। लेकिन उत्तर प्रदेश में ऐसा लगा कि भारतीय जनता पार्टी इस कार्रवाई से चुनावी लाभ उठाने की कोशिश करेगी। निचले स्तर के कार्यकर्ताओं ने कुछ इस प्रकार का प्रचार शुरू कर दिया, जैसे विपक्षी दलों के लोग देशभक्त नहीं हैं।

इसी प्रकार नोटबंदी के बाद इस प्रकार का प्रचार किया जाने लगा जैसे इसके समर्थक काला धन के विरोधी हैं तथा नोटबंदी की नीति पर प्रश्न उठाने वाले लोग काला धन के पक्ष में खड़े हैं। एक नया पहलू यह भी आ गया है कि अर्थव्यवस्था में नकदी के बजाय इलेक्ट्रानिक भुगतान को बढ़ावा दिया जाये। पहले की नीतियां किसान विरोधी एवं आदिवासियों की विरोधी थीं। नयी नीतियां छोटे उद्योगों एवं छोटे कारोबारियों की विरोधी हैं। रोजमर्रा के मजदूरों की विरोधी हैं। इनपर गंभीर बहस का रास्ता ही बंद कर दिया गया है। क्योंकि इन नीतियों में खामियों के प्रकाश में आने से उत्तर प्रदेश में होने वाले चुनावों पर प्रभाव पड़ेगा।

इतना ही नहीं, इन राष्ट्रीय नीतियों का पहलू केवल एक पक्ष है। जमीनी स्तर पर धर्म, जाति एवं उपजाति स्तर पर जिस प्रकार की गोलबंदी की जा रही है उससे, उत्तर प्रदेश में समाज कई स्तरों पर बंटता चला जा रहा है। आपसी वैमनस्य चुनाव के बाद भी बरकरार रहेगा।

पूंजीवाद का विकास, सदैव जनता को बांट कर, उनकी एकता की संभावना को खत्म कर ही हुआ है। जो लोग लोकसत्ता के निर्माण के काम में लगे हैं, उनके लिए चुनौतियां निरंतर बढ़ती जा रही हैं। जो जातियां एवं समुदाय सदियों से दबाये गये थे तथा पिछड़े थे, उनका उभार भी श्रम करने वाली शक्तियों की एकता को बढ़ाने का माध्यम नहीं बन पा रही है। क्योंकि पिछड़ों एवं दलितों के बीच नयी-नयी उप-जातीय चेतना को खड़ा करने का काम जोर-शोर से चल रहा है। और यह सब पार्टियों की राजनीतिक रणनीति का हिस्सा है।

ऐसे में लोकसत्ता निर्माण के काम से जुड़े लोगों को दो स्तर की रणनीति अपनानी होगी। एक पूंजीवादी विकास के लिए अपनायी जा रही नीतियों का पर्त-दर-पर्त खुलासा करते जाना होगा और साथ ही यह भी स्थापित करते जाना होगा कि इन नीतियों को इसी कारण लागू किया जाना संभव हो रहा है क्योंकि श्रम करने वाली एवं शोषित जमातें बंटी हुई हैं। यह राजनीति इनके बीच दूरियां खड़ी करने की माहिर हैं। इस राजनीति के दुष्चक्र से इन्हें बाहर निकलकर अपनी स्वतंत्र शक्ति खड़ी करनी होगी। धर्म, जाति एवं उपजातियों के दलदल में फंसी राजनीति, श्रमिकों, दलितों एवं शोषितों के उत्थान का माध्यम नहीं बन सकती हैं।

राष्ट्रीय नीतियां एवं जमीनी हकीकत कहां जुड़ती हैं, इनका खुलासा करते जाना, लोकसत्ता के पक्षधरों के लिए अति आवश्यक है। हर चुनाव लोक-एकता को कमजोर करने का माध्यम बनता जा रहा है। इन्हें निष्प्रभावी करने के लिए, अपने छोटे-छोटे घरौंदों से निकल कर व्यापक आंदोलन को खड़ा करने में लगाना होगा।

बिमल कुमार

लोकतंत्र के खतरे

❑ गांधी

कोई भी मानव-संस्था ऐसी नहीं है, जिसके अपने खतरे न हों। संस्था जितनी बड़ी होती है, उसके दुरुपयोग की सम्भावनाएं उतनी ही अधिक रहती हैं। लोकतंत्र एक महान संस्था है और इसलिए उसके दुरुपयोग की सम्भावनाएं उतनी ही अधिक हैं। इसलिए इलाज यही है कि दुरुपयोग की सम्भावना कम-से-कम कर दी जाए, यह नहीं कि लोकतंत्र ही न बनाये जाएं।

कांग्रेस एक विशाल लोकतांत्रिक संस्था बन चुकी है। पिछले बारह महीनों के दौरान वह उत्कर्ष की एक ऊंची मंजिल तक पहुंच गयी है। लाखों की तादाद में लोग, बाकायदा सदस्यों में नाम लिखाए बिना ही, कांग्रेस में शामिल हो गये हैं और इस तरह उन्होंने उसकी शोभा में चार चांद लगा दिये हैं। *लेकिन साथ ही कांग्रेस में गुंडाशाही भी इतनी बढ़ गयी है, जितनी पहले कभी नहीं थी। यह अनिवार्य ही था। स्वयंसेवकों को चुनने के लिए निश्चित किए गए सामान्य नियमों को, संघर्ष के अंतिम दौर में, मानो ताक पर ही रख दिया गया था। नतीजा यह हुआ कि कुछ स्थानों पर गुंडाशाही साफ दिखायी देने लगी है। कुछ कांग्रेसियों को तो धमकियां तक दी गयी हैं कि यदि वे मांगी गयी राशि नहीं देंगे तो उनपर मुसीबत टूट पड़ेगी। जाहिर है कि पेशेवर गुंडे भी इस माहौल से फायदा उठाकर अपना धन्धा चालू कर सकते हैं।*

ताज्जुब की बात तो यह है कि इतने बड़े जन जागरण के अनुपात में, इस तरह के जितने मामले मेरे सामने आये हैं, वे संख्या में उससे तो कम ही हैं, जितने की आशंका की जाती थी। मेरा अपना विश्वास तो यह है कि इस सुखद स्थिति का कारण, कांग्रेस द्वारा अपनाया अहिंसा का सिद्धांत है, भले ही हमने उस पर बड़े मोटे तौर पर अमल किया हो। लेकिन गुंडाशाही इतनी तो अवश्य हुई है कि हम समय रहते चेतें और उसकी रोकथाम के लिए उपाय करें और आगे से सावधानी रखें।

स्वभावतः मुझे जो उपाय सूझता है वह यही है कि शास्त्रीय पद्धति से तथा अधिक समझदारी और अनुशासित ढंग से, अहिंसा के सिद्धांत पर, निश्चित रूप से अमल किया जाए। पहली बात तो यह है कि हमने अहिंसा का जितनी दृढ़ता से पालन किया है, यदि उससे अधिक दृढ़ता दिखायी होती तो एक भी ऐसे स्त्री-पुरुष को स्वयंसेवक न बनाया जाता, जो स्वयंसेवकों की भर्ती के नियमों की कसौटी पर बिलकुल खरे न उतरते। इसके विरुद्ध यह तो कोई दलील ही नहीं हुई कि तब उस स्थिति में, संघर्ष के अंतिम दौर के लिए, कोई स्वयंसेवक रह ही नहीं जाता *और संघर्ष बिलकुल ही असफल हो जाता। मेरा अनुभव मुझे बिलकुल दूसरी ही सीख देता है। अहिंसक संघर्ष तो केवल एक ही सत्याग्रही के बल पर भी चल सकता है; और लाखों गैर-सत्याग्रही साथ होने पर भी नहीं चलाया जा सकता। फिर मैं तो शुद्ध अहिंसा के मार्ग पर चलते हुए, उससे किंचित भी भटककर एक संदिग्ध किस्म की सफलता प्राप्त करने की अपेक्षा, नितांत असफलता को ही गले लगाना ज्यादा पसंद करूंगा।* जहां तक अहिंसा का संबंध है, मुझे लगता है कि इसमें एक बिलकुल ही गैर-समझौतावादी दृष्टिकोण अपनाए बिना, तनिक भी न झुकने का संकल्प किए बिना, अंत में विपत्ति के अतिरिक्त कुछ हाथ नहीं लग सकेगा। यह इसलिए कि यदि ऐसा किया गया तो हो सकता है कि संकट के निर्णायक क्षणों में हम अपने-आपको अहिंसा की कसौटी पर खरा सिद्ध न कर पायें और संभव है कि हम अपने विरुद्ध अव्यवस्था फैलाने वाली, एकाएक खड़ी हो जाने वाली, शक्तियों का सामना करने के लिए, अपने-आपको बिलकुल ही अप्रस्तुत और असमर्थ पायें।

पर अंधाधुंध भर्ती की यह गलती कर चुकने के बाद, अब उससे हुई हानि की पूर्ति करने का अहिंसक उपाय क्या है? *अहिंसा का अर्थ है उच्च कोटि का साहस और इसीलिए कष्ट-सहने के लिए तैयार रहना। इसलिए डराने-धमकाने, धोखा-धड़ी करने या इससे भी बुरी हरकतों के सामने हमें सिर नहीं झुकाना है, भले ही उसके कारण हममें-से कुछ को अपनी बेशकीमत जानें गंवानी पड़ें। धमकी-भरे पत्र लिखने वालों को यह महसूस करा देना चाहिए कि उनकी धमकियों की कोई परवाह नहीं की जायेगी। साथ ही, हमें उनको लगी बीमारी का ठीक-ठीक निदान करके उनका उचित उपचार करना चाहिए। गुंडे भी तो आखिर हमारे समाज के ही अंग हैं और इसलिए उनका उपचार भी पूरी सहृदयता तथा सहानुभूति के साथ किया जाना चाहिए।* आमतौर पर लोग गुंडाशाही इसलिए नहीं किया करते कि उनको यही पसंद है। यह वास्तव में, हमारे समाज में व्याप्त, एक किसी गहरे रोग का लक्षण है। हम शासन-तंत्र में व्याप्त गुंडाशाही के साथ अपने संबंधों पर जिस नियम को लागू करते हैं, ठीक वही नियम समाज की अंदरूनी गुंडाशाही के साथ हमें लागू करना चाहिए। यदि हमें विश्वास हो गया है कि उस अत्यन्त ही संगठित किस्म की गुंडाशाही से, अहिंसक ढंग से, निबटने की सामर्थ्य हमारे अंदर मौजूद है तो अंदरूनी गुंडाशाही से, इसी तरीके से निबटने के लिए, हमें अपने अंदर कहीं अधिक सामर्थ्य महसूस करनी चाहिए।

इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि इस विराम-संधि के दौरान हालांकि कांग्रेसी भी, अन्य सभी नागरिकों की भांति, पुलिस की सहायता लेने के लिए स्वतंत्र हैं, फिर भी हमें इस रोग से निबटने के लिए पुलिस की सहायता नहीं लेनी चाहिए। मैंने जो उपाय सुझाया है, वह सुधार, हृदय-परिवर्तन और प्रेम का उपाय है। पुलिस की सहायता लेना तो दंड, भय और यदि सचमुच अश्रद्धा नहीं तो श्रद्धा के अभाव का मार्ग तो है ही।

इसलिए हम दोनों तरीकों को एक साथ लेकर नहीं चल सकते। सुधार का मार्ग किसी-न-किसी मंजिल पर कठिन तो लगता है, पर वास्तव में, वह है—सबसे अधिक सरल।

अनुयायियों के लिए

एक मित्र लिखते हैं—

आपके अनुयायी जब राजनैतिक वाद-विवाद में भाग लें, तो उन्हें किस प्रकार का बरताव करना चाहिए। कृपया इस बारे में कुछ सलाह दें। वह बहुत सहायक होगी। खासकर नीचे लिखी बातों पर आपकी सलाह जरूरी है :—

1. प्रतिपक्षी की ऐसी निन्दा करना, जिससे वह लोगों की नजरों से गिर जाए, उचित है या नहीं? 2. प्रतिपक्षी की कैसी टीका उचित कही जा सकती है? 3. विरोध किस हद तक किया जाए? 4. पद और सत्ता प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाए या नहीं?

मैं पहले बतला चुका हूं कि मैं किसी को अपना अनुयायी नहीं मानता। मैं स्वयं अपना अनुयायी बनूं—यही काफी है। यही एक पर्याप्त कष्टसाध्य काम है। लेकिन मैं जानता हूं कि बहुतेरे आदमी अपने को, मेरा अनुयायी बतलाते हैं। इसलिए मेरा, उनकी खातिर, इन सवालों का जवाब उचित होगा। यदि वे मेरे अनुयायी बनने के बजाय, जिस वस्तु को मैं जीवन में उतारने का प्रयत्न कर रहा हूं, उसके अनुयायी बनेंगे, तो देखेंगे कि सत्य और अहिंसा से इन प्रश्नों के नीचे लिखे उत्तर निकलते हैं :—

(क) विरोधी की निन्दा कभी की ही नहीं जा सकती। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि उसके कार्यों का सच्चा वर्णन नहीं किया जा सकता। कोई विरोध करने के कारण ही दुर्जन नहीं हो जाता। हम अपने लिए जितना भला होने का दावा करते हैं, वह भी उतना ही भला आदमी हो सकता है; और फिर भी यह संभव है कि उसके और हमारे बीच महत्त्वपूर्ण मतभेद हों।

(ख) इसलिए हमारी टीका तो यह होगी कि अगर हम उसे झूठा मानते हैं, तो उसके *असत्य का सत्य से, अविवेक का विवेक से, उद्दंडता का शांतिपूर्ण साहस से, हिंसा का सहनशीलता से, अहंकार का नम्रता से और बुराई का भलाई से सामना करें। 'मेरा अनुयायी' निन्दा करने की नहीं, बल्कि हृदय-परिवर्तन की पूरी कोशिश करेगा।*

(ग) यह तो सवाल ही नहीं उठना चाहिए कि विरोध किस हद तक किया जाए। क्योंकि *विरोध व्यक्ति के साथ न होकर, उसके उन कार्यों के प्रति होना चाहिए, जो सदाचार या समाज-हित के विघातक हों।*

(घ) पदों और सत्ता से अलग रहना चाहिए। पर यदि यह स्पष्ट दिखता हो कि उनके माध्यम से अधिक सेवा हो सकेगी, तो उन्हें स्वीकार किया जा सकता है।

(अंग्रेजी से) यंग इंडिया, 7-5-1931 ❑

सर्वोदयी लोकतंत्र

❑ **महात्मा गांधी**

ऐसा समाज अनगिनत गाँवों का बना होगा। उसका फैलाव एक के ऊपर एक के ढंग का नहीं, बल्कि लहरों की तरह एक के बाद एक ही शकल में होगा। जीवन मीनार की शकल में नहीं होगा, जहाँ ऊपर की तंग चोटी को नीचे चौड़े पाये पर खड़ा रहना पड़ता है। वहाँ तो जीवन समुद्र की लहरों की तरह एक के बाद एक घेरे की शकल में होगा, जिसका केन्द्र व्यक्ति होगा। व्यक्ति गाँव के लिए और गाँव ग्राम-समूह के लिए मर मिटने को हमेशा तैयार रहेगा। इस तरह अंत में सारा समाज ऐसे व्यक्तियों का बन जायेगा, जो अहंकार में आकर कभी किसी पर हमला नहीं करेंगे, बल्कि सदा विनीत रहेंगे और उस समुद्र के गौरव के हिस्सेदार बनेंगे, जिसके वे अविभाज्य अंग हैं।

इसलिए सबसे बाहर का घेरा अपनी शक्ति का उपयोग भीतरवालों को कुचलने में नहीं करेगा। बल्कि भीतरवाला सबको ताकत पहुँचायेगा और स्वयं उनसे बल ग्रहण करेगा। मुझ पर यह कटाक्ष किया जा सकता है कि यह सब खयाली पुलाव है और इसलिए जरा भी विचारणीय नहीं है। युक्लिड की परिभाषा का बिन्दु भले ही मनुष्य खींच न सके, तो भी उसा शाश्वत मूल्य तो है। इसी तरह मेरे इस चित्र का भी मानव जाति के जीवित रहने के लिए अपना मूल्य है। इस तस्वीर तक पूरी तरह पहुँचना सम्भव नहीं है, फिर भी इस सही तस्वीर तक पहुँचना भारत की जिन्दगी का मकसद होना चाहिए। हमें क्या चाहिए, इसका सही चित्र तो हमारे पास होना ही चाहिए। तब हमें उससे मिलती-जुलती कोई चीज प्राप्त हो सकती है। मेरा दावा है कि मैं इस चित्र की सच्चाई सिद्ध कर सकूँगा—जिसमें सबसे आखिरी और सबसे पहला दोनों बराबर होंगे या दूसरे शब्दों में कहें तो न कोई पहला होगा, न आखिरी। *—हरिजन, 28-7-'46*

अहिंसा के आधार पर खड़े स्वराज्य में कोई किसी का शत्रु नहीं होता, सभी सामान्य ध्येय के लिए अपने-अपने उचित हिस्से का काम करते हैं, सब पढ़-लिख सकते हैं और उनका ज्ञान दिनोंदिन बढ़ता रहता है। रोग और बीमारी कम से कम होती है। कोई दरिद्र नहीं होता और मजदूरों को हमेशा काम मिल जाता है। ऐसे राज्य में जुए, शराबखोरी, दुराचार या वर्ग-द्वेष के लिए कोई स्थान नहीं होता। धनवान अपना धन बुद्धिमानी से और उपयोगी ढंग पर खर्च करेंगे; अपनी शान-शौकत और सांसारिक सुखों को बढ़ाने में उसे बरबाद नहीं करेंगे। यह नहीं होना चाहिए कि मुट्ठीभर अमीर लोग तो रत्न-जटित महलों में रहें और करोड़ों लोग वायु और प्रकाशहीन गंदे झोपड़ों में रहें। हिन्दू-मुस्लिम झगड़े, मनुष्यता और ऊँच-नीच के भारी भेद आदि बातें उनमें नहीं होनी चाहिए।

—हरिजन, 25-3-'39

महादेव देसाई जयंती : 1 जनवरी

महादेव देसाई की डायरी से

हिन्दू और मुसलमान

❑ गांधी

एकता परिषद् तो एकता का आरंभ-काल है। उसके प्रस्ताव अपूर्ण, उसमें भाग लेने वाले अपूर्ण, इसलिए आरंभ भी अपूर्ण। फिर भी यह परिषद् बहुत महत्त्व की थी। उसकी जड़ें गहरी जायेंगी। उसके लगाये हुए कोमल वृक्ष की रक्षा करना, उसमें पानी सींचना हमारा काम है।

गहरा विचार करने पर हम देखेंगे कि इस कठिन प्रश्न का हल एक ही बात में है। कोई भी कानून को अपने हाथ में न ले। मैं तो मानता हूं कि सामने वाला घर मेरा है, इसलिए मुझे उस पर कब्जा करके बैठ जाना जंगलीपन है। मुझे अपना हक पंच के या अदालत के पास साबित करना चाहिए और पंच के या अदालत के निर्णय का आदर करना चाहिए। जहां इस नियम का पालन नहीं होता, वहां लोगों का नाश हो जाता है। इस सुनहरे नियम को दोनों पक्ष मान लें, वहां तो कहने ही क्या? परंतु जहां एक पक्ष मारपीट ही करना चाहे, वहां भी दूसरा पक्ष नियम का पालन करे, तो काफी है। उस पक्ष की अंत में हानि होगी ही नहीं, यह निश्चित बात है। *मान लीजिए कि मेरे घर पर तीसरे आदमी ने कब्जा कर लिया। सुव्यवस्थित समाज में पंच मुझे वापस कब्जा जरूर दिलायेगा। घटिया किस्म के समाज में यह काम अदालत करती है। पंच का दंड लोकमत होता है। अदालत की सजा कैदखाना था या बंदूक होती है। प्रत्येक व्यवस्था में मारपीट न करने वाला अपना कब्जा वापस प्राप्त कर सकता है।*

जब तक इस अनिवार्य नियम को हम मान नहीं लेते, तब तक हमरे बीच झगड़े होते ही रहेंगे, इस बारे में कोई शंका न करे। और जब तक ऐसे झगड़े होते रहेंगे, तब तक शांत उपायों से हम स्वराज्य हरगिज नहीं ले सकेंगे, यह स्वयंसिद्ध जैसी बात है। यह संभव हो सकता है कि हिन्दू या मुसलमान दो में से एक को स्वराज्य नहीं चाहिए और स्वराज्य की अपेक्षा झगड़े ज्यादा पसंद हों, ऐसों के लिए तो कोई भी दलील लागू नहीं होगी। परंतु जो स्वराज्य चाहते हैं, उनके लिए उपर्युक्त नियम स्वीकार करना अनिवार्य ही है। हमें तो स्वराज्य के बिना जीना दूभर है, इसलिए हम कभी मारपीट के जंगली कानून के वशीभूत न हों।

परंतु पंच अथवा अदालत का आश्रय लेने के दृढ़ निश्चय के बावजूद कुछ प्रसंग ऐसे आ जाते हैं, जब मन से या बेमन से मारपीट में भाग लेने अथवा भाग जाने या शांतिपूर्वक मृत्यु की शरण में जाने का समय आ जाता है। *मैं भजन-कीर्तन करता हुआ मस्जिद के सामने से निकलता हूं और मुझपर कोई हमला कर देता है, तब मैं क्या करूं? मेरे ही घर से कोई कब्रबनाने लगता है, तब मैं क्या करूं? अथवा एक गरीब मुसलमान खानगी तौर पर अपने घर में गोवध करता है और उस पर हिन्दू टूट पड़ें तो वह क्या करे? इन तीनों संयोगों में कानून की बात देखने का समय नहीं होता। तब सम्बद्ध मनुष्य क्या करें?*

यदि उन्हें शांतिपूर्वक मरना आता हो, तब तो उत्तम उपाय यह है ही। उसकी बराबरी तो पंच भी नहीं कर सकता। *परंतु ऐसा बलिदान सभी हरगिज नहीं दे सकते। तब क्या भाग जायं? यह तो कायर का लक्षणव है। तब साधारणव तौर पर एक ही इलाज रह जाता है। ऐसे समय उन लोगों को मारपीट में भाग लेकर भी अपनी रक्षा करनी ही होगी। यह एक सुव्यवस्थित तंत्र में प्रत्येक व्यक्ति को है ही और होना ही चाहिए।*

परंतु ऐसे अवसर क्वचित् ही आते हैं। सौ में एक बार मुश्किल से अच्छे मनुष्यों की ऐसी परीक्षा होती है। सामान्य अनुभव ऐसा है कि शांत होकर बैठने वाले की ईश्वर परीक्षा नहीं लेता। हम निष्पक्ष होकर विचार करें तो सौ में निन्यानबे उदाहरण ऐसे नजर आयेंगे, जब मारपीट के लिए दोनों पक्ष थोड़ी-बहुत मात्रा में जिम्मेदार होते हैं। ऐसे तमाम उदाहरणों में एक पक्ष भी दोषरहित रहने का इरादा कर ले तो रह सकता है। और जो ऐसे मामलों में बच जायेगा, वह जीतेगा। ❑

'सर्वोदय जगत'

के सभी सुहृद पाठकों, शुभचिन्तकों, लेखकों को सूचित करते हुए हर्ष हो रहा है कि मार्च, 2017 के दोनों अंक 'चम्पारण सत्याग्रह शताब्दी वर्ष' पर केन्द्रित विशेषांक एवं संयुक्तांक होगा। आप सभी से निवेदन है कि अपने महत्त्वपूर्ण आलेख, कविता पत्रिका के इस विशेषांक हेतु हमें 10 फरवरी, 2017 तक भेजने की कृपा करें।

–सं.

जे.सी. कुमारप्पा जयंती : 4 जनवरी

गांधीवादी-अर्थनीति

❑ जे.सी. कुमारप्पा

यहां हम गांधीवादी समाज की तस्वीर पेश करेंगे। इसमें संगठन इस तरह का होगा, जिसमें अपनी जरूरत की सब चीजें—जैसे खाना, कपड़ा, मकान, एक तरह से तालीम भी और दूसरी जरूरतें—लोग मिलकर खुद पैदा कर लेते हैं। इनको पैदा करने का ढंग गैर-केन्द्रीय कंट्रोल वाला होता है। कंट्रोल जितना ज्यादा होगा, गांधीवादी आदर्श से चीज उतनी ही हट जायेगी। अगर खुद कंट्रोल और खुद शिस्त या संयम का आदर्श न रहा, तो सब का सब बंटाधार ही हो जायेगा। मिसाल के तौर पर देखिये कि इमारत बनने के पहले उसका नक्शा खींचा जाता है। उसके मुताबिक एक राज किसी कोने में बैठा काम करता है। लेकिन वह बंटाधार नहीं है, क्योंकि इंजीनियर ने यह हिसाब लगा लिया कि कहां क्या चीज बनती है। हर कारीगर उस नक्शे के मुताबिक काम कर रहा है, नक्शा सबको कंट्रोल करता है। इसी तरह से *हमारे जीवन को कंट्रोल करने वाली जो योजना है, उसका नाम है अहिंसा के जरिये सत्य की प्राप्ति। इसमें बंटाधार नहीं हो सकता, क्योंकि यह अटल उसूल है। इनका न आदि है न अंत। सर्वव्यापी योजना में बंटाधार हो ही नहीं सकता। हर आदमी का नाता उस ताकत से जुड़ा रहता है, जिसके बल पर सबका जीवन निर्भर है।* कलकत्ता, मद्रास और बंबई में बिजली की ट्राम चलती हैं। इनको कंट्रोल करने के दो ढंग हैं। जब तक वह नीचे वाली रेल पर रहती हैं और ऊपर जाने वाली तार से उनका संबंध रहता है, तब तक वह रास्ते से नहीं हट सकतीं। जहां हटीं कि संबंध गया। इसी तरह से जब तक हमारा संबंध एक तरफ अमर शक्ति से और दूसरी तरफ नीचे वाले रास्ते से बना रहता है, कोई गड़बड़ी नहीं हो सकती। जिस तरह इंजीनियर के बनाये नक्शे के मुताबिक काम करने से राजगीर बिना गलती किये ठीक-ठीक इमारत बनाता चला जाता है, उसी तरह खुद-कंट्रोल और खुद-शिस्त पर चलने वाला आदमी कोई गलती नहीं कर सकता। उसका वास्ता तो आला दिमाग और आला राज से रहता है। हमारी योजना कुछ ही क्यों न हो, अगर हम खुद-कंट्रोल और खुद-शिस्त के जरिये इसे अहिंसा और सत्य की प्राप्ति की तरफ—जो सचमुच असली योजना है—ले जायेंगे, तो हम सबके काम में एका भी पैदा हो जायेगा और बाकी समाज के साथ हम घुल-मिलकर एक-रूप भी हो जायेंगे। गड़बड़ तभी होगी, जब आदमियों में काबिलियत न हो और यह बुनियादी शर्तें वह पूरी न करते हों। इसलिए *गांधीवादी समाज के अंदर हर व्यक्ति को अपने विकास की पूरी-पूरी गुंजाइश मिलती है और साथ ही साथ गड़बड़ हो जाने का खतरा भी खत्म हो जाता है।*

अब इस आधार पर जुटबंद काम के लिए हम योजना बना सकते हैं। पहली जरूरत खाने की है। खाना पैदा करने के लिए हमको सहयोग के आधार पर संगठन करना चाहिए। हमें यह जानना चाहिए कि हम चाहते क्या हैं। संतुलित खुराक नाम की एक चीज होती है। इसमें महज अनाज ही का बोलबाला नहीं रहता, बल्कि इसे दूसरी चीजों के साथ मिलाकर खुराक को मुकम्मल किया जाता है। गेहूं के अलावा थोड़ी-सी चिकनाई भी होना चाहिए। कुछ धातुओं की भी जरूरत है। लेकिन अनाज में धातु बहुत कम रहती है, तो उस कमी को पूरा करने के लिए सब्जी और फलों का हम इस्तेमाल करेंगे। गेहूं तो हमारी जरूरी खुराक रहेगा। उसके साथ में घी, फल, सब्जी और ऐसी ही कुछ चीजें लेंगे। मान लीजिए कि 4000 आदमियों के लिए संतुलित खुराक चाहिए, तो हम हिसाब लगायेंगे : प्रति व्यक्ति आधा सेर गेहूं के हिसाब से 50 मन गेहूं चाहिए। इसी तरह से दूसरी चीजों का अंदाज कर लिया। कुछ जरूरतें देख लेने के बाद अब यह हिसाब लगाया कि कितनी जमीन में गेहूं बोया जाय, कितने में क्या चीज। तब हमें यह मालूम हो जायेगा कि गेहूं के लिए इतनी जमीन चाहिए, सब्जी के लिए इतनी, वगैरह। मान लीजिए, बारह हजार एकड़ की जरूरत पड़ी। इसके मिलने पर जुताई करेंगे। अब मिट्टी तरह-तरह की हो सकती है। जो जमीन हमारी जरूरत की जिस चीज के लिए मौजूं हो, उसमें वही चीज बोयेंगे। यह हो सकता है कि जरूरत के लायक कपास हम उसमें पैदा न कर सकें। इसके बजाय हम सब्जी ही उगा लें और जो हमारे पास बेशी चीजें बचें, उनके एवज में किसी दूसरे से वह चीज ले लें जो उसने पैदा की हो और जिसकी हमें जरूरत हो, लेकिन हमारे पास वह हो नहीं। इस तरह से हमें अपनी सारी खेती का सिलसिला बैठाना है। इसको संतुलित खुराक के नाम के आधार पर संतुलित खेती कहा जाता है। इस रीति से हम अपने दायरे के अंदर ही अपनी जरूरतें पूरी कर लेंगे या इसमें कुछ चूक बाकी रही, तो बाहर वालों के सहयोग से उसे पूरा कर लेंगे। इस चीज के लिए हमें हरएक का सहयोग मिलना चाहिए। *सारा व्यापार हम बंद कर देंगे। सब लोगों या कुनबों की पैदावार एक भंडार में—जिसका नाम होगा बहुधंधी सहयोगी सोसाइटी—जमा कर ली जायेगी।* मान लीजिए, एक आदमी को तेल की जरूरत पड़ी, तो उसने जो गेहूं बढ़ती उगाया होगा, उसके एवज में उसे तेल देने की कोशिश की जायेगी। सहयोगी सोसाइटी उन किसानों से, जो तिलहन उगाते हैं, सब तिलहन लेकर जमा कर लेगी। तेली लोग तो तिलहन नहीं पैदा करते। वह बीज सहयोगी सोसाइटी से लेकर तेल निकालेगा। उस आदमी को कुछ मजदूरी नहीं दी जाती। नकदी की शक्ल में उसे मेहनत के दाम नहीं मिलते। तैयार होने पर तेल भी सहयोगी सोसाइटी में पहुंच गया और खली तेल के पास रही। पिछले जमाने में मजदूरी का यह

तरीका खूब अच्छी तरह चलता था। आज भी गांवों में कहीं-कहीं इसका रिवाज है।

सारी की सारी मजदूरी सबके भंडार से सहयोगी तरीके पर दी जाती थी और इस भंडार में से हरएक को समाज की सेवा करने के सिले में कुछ न कुछ मिल जाता था—नाई को, भंगी को, धोबी को, मोची को, हर किसी को। खलिहान के समय सबके भंडार से गांव के हर सेवक को—मास्टर तक को—अपना-अपना कोटा दे दिया जाता था। यह उसे अपनी सेा के एवज में मिलता था। उस जमाने में बहुत सारे उस्तरे तो लोग रख नहीं सकते थे। हज्जाम के पास एक उस्तरा होता था, जिसके जरिये वह हजामत बनाने का यानी एक खास तकनीकी काम करता था। लुहार इस्पात और लोहा बनाता-ढालता था। उस्तरा भी वही बनाता था। अगर हर कोई एक-एक उस्तरा रखने लग जाता, तब तो ढेर लोहा-इस्पात बरबाद होता। हमारे पुराने संगठन में गांव वालों को अपनी-अपनी सेवा के सिले में अपना कोटा या कम से कम मजदूरी—सबके भंडार से मिल जाता था। मोची हर आदमी के लिए साल में चप्पल का एक जोड़ा बनाकर दे देता था। चमार हर किसान को एक खाल दिया करता था। अगर किसी को बढ़ती चप्पल चाहिए, तो इसके लिए उसे अलग से चुकाना पड़ता था। हर गांव के सेवक की परवरिश करने का खयाल उस भंडार से रखा जाता था। आज बहुधंधी सहयोगी सोसाइटियां हैं, जो सचमुच ऐसे आर्थिक केन्द्र बनायी जा सकती हैं, जिनसे सारे कुनबे या लोगों के लिए ठीक से बंदोबस्त किया जा सके। इस तरह हमने देखा कि किस तरह एक आर्थिक संगठन के जरिये हम सब जरूरी चीजें पैदा कर ले सकते हैं।

मान लीजिए, कोई बड़ा काम है, जिसमें हजारों आदमी लगे हैं, तो उनकी खातिर हमें तरह-तरह के माहिर, जैसे इंजीनियर वगैरह रखने पड़ेंगे। हमारे पुराने निजाम में सिंचाई या आबपाशी योजनाएं चलती थीं। सिंचाई के कारण जमीन के उपजाऊपन की एक खास तादाद में गारंटी होती जाती थी। उस वक्त एक तरीका चालू था, जिसे दुहेरा-तालाब-तरीका कहते हैं। इसमें यह होता था कि पानी पहले एक छोटे तालाब से भरा जाता था। पानी के साथ मिट्टी भी आयी। यह मिट्टी उस तालाब में बैठ जाती थी और साफ पानी ऊपर-ऊपर से दूसरे या बड़े तालाब में ले जाया जाता था। इस दूसरे तालाब में सब पानी जमा करके रख लेते थे और नहरों के जरिये इससे पानी लेकर सिंचाई करते थे। पहले तालाब की मिट्टी कुछ किसानों के हवाले कर दी जाती थी। वे किसान इस जमी हुई मिट्टी में से अपना हिस्सा निकालते वक्त इसे अच्छी तरह निचोड़ लेते थे। दूसरे तालाब में मिट्टी नहीं पहुंचती थी और इसलिए वहां साफ पानी जमा हो जाता था। यह देखिये—वहां पर सेवा और स्वार्थ सबके भले की खातिर साथ-साथ चल रहे हैं। बड़े तालाब में मिट्टी नहीं जमने देना समाज की सेवा है। कुदरत का मजदूरी देने का यही तरीका है। मान लीजिये, मेले का दिन है। लोगों ने खाया-पिया और जूठन छोड़ दी। कौवे आये और उसे साफ कर गये। इसमें 'काम और मजदूरी' दोनों शामिल हैं। चींटियां आकर बिखरी हुई शकर साफ कर डालती हैं। हमारे पुराने संगठन का आधार ही यह था कि मजदूरी अलग से नहीं देनी पड़ती थी। इन्हीं उसूलों पर हमें अपने समाज का दोबारा संगठन करना चाहिए—*एक जमाने में जिस सभ्यता में हमने आनंद लूटा था, उसकी हालतों और अच्छी चीजों का हमें मनन करना चाहिए। लेकिन हम तो दिन पर दिन जंगली होते चले जा रहे हैं।*

अपने नये समाज में हम इन समाजी उसूलों को बरतना चाहते हैं। अगर हमें यह जरूरत है कि पानी एक खास दिशा में जाय, तो हमें सिर्फ यही करना है कि पानी के बहाव का लेवल ठीक कर दें। इसी तरह से हमें *अपने सामाजिक ढांचे को इस ढंग से तरतीब देना है कि आदमी अपनी खातिर भी काम करता रहे और समाज की खातिर भी। हमारी पंचायतों को आम सेवाकार्यों के लिए ट्रेनिंग दी जानी चाहिए। 20-30 गांवों के लिए एक पंचायत हो सकती है। पहले हम तहसील को लेकर काम करें, फिर जिला, तब सूबा और आखिर में सारा देश। सिर्फ इसी ढंग से हम एक कौमी या राष्ट्रीय सरकार खड़ी कर सकेंगे।* अपना काम करने में जो लोग होशियार हैं, वही अपनी खूबी और मेहनत के मुताबिक काम करते-करते आगे बढ़कर ऊपर पहुंच जायेंगे।

हमारी यह जरूरतें ठीक तरह से तभी पूरी हो सकेंगी, जब लायक आदमी इनको हाथ में उठायेंगे। उनमें जोश और जान डालकर हमको चाहिए कि उन्हें मैदान में लायें, ताकि वह देश की जरूरत समझकर शौक से काम करें। *गांव के ढांचे की हमारी तस्वीर मोटे तौर पर यही है। इससे पता चलता है कि जो आर्थिक, सामाजिक और राष्ट्रीय संगठन हम खड़ा करना चाहते हैं, उसका नक्शा क्या होगा। इससे यह भी मालूम होगा कि हमारे संगठन की बुनियाद लोगों के चाल-चलन पर है और इस चाल-चलन का आधार सेवा और कर्तव्य-पालन है। यही वह चीज है, जिसके जरिये इंसानी समाज अहिंसा और सत्य की तरफ लगातार आगे बढ़ सकता है।* ❑

विनम्र श्रद्धांजलि

'गांधी-मार्ग' के संपादक एवं पर्यावरणविद् अनुपम मिश्र जी के निधन की खबर सुनकर सर्व सेवा संघ, प्रकाशन विभाग एवं 'सर्वोदय जगत' परिवार मर्माहत है। आप के निधन से हुई अपूरणीय क्षति की भरपाई हो पाना सम्भव नहीं है, ऐसा हम सभी महसूस कर रहे हैं।

'सर्व सेवा संघ', 'प्रकाशन विभाग' एवं 'सर्वोदय जगत' परिवार ईश्वर से प्रार्थना करता है कि दिवंगत आत्मा को शांति प्रदान करे।

सर्वोदय परिवार अपनी विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करता है। **–सं.**

ये भूमि हड़पने वाले

❑ **जयप्रकाश नारायण**

लुई फिशर : स्वतंत्र भारत में क्या होगा? किसानों की स्थिति सुधारने के लिए आपका क्या कार्यक्रम है?

गांधी : किसान लोग जमीन ले लेंगे। जमीन ले लेने के लिए उन्हें हमको कहना नहीं पड़ेगा। वे ले लेंगे।

लुई फिशर : क्या जमींदारों को मुआवजा दिया जायेगा?

गांधी : नहीं, वह तो आर्थिक दृष्टि से असंभव ही होगा। आप देखते ही हैं कि (मुस्कुराते हुए) अपने करोड़पति मित्रों के प्रति हमारी कृतज्ञता हमें ऐसी बातें कहने से रोक नहीं सकती। गांव स्वशासी इकाई बनेगा और स्वतंत्र जीवन जीयेगा।

(देखिये लुई फिशर द्वारा लिखित 'ए वीक विथ गांधी'; इंटरनेशनल बुक हाउस लि., मुम्बई, 1944, पृ.43)

गांधी की कल्पना

यह थी कल्पना बीसवीं शताब्दी के अहिंसा के देवदूत की। इस विषय में उनकी कल्पना सच साबित नहीं हुई जैसे कि कई अन्य विषयों में भी। न तो किसानों ने जमीन ली और न किसी ने उनसे लेने को कहा। यदि किसी ने ऐसी काशिश की भी होती तो जनतांत्रिक कानून और व्यवस्था तथा राजकीय समाजवाद की जो कल्पना नेहरू की थी, वह उसे ऐसा करने नहीं देती। लगभग 18 वर्षों तक इसी कल्पना का देश पर शासन रहा; केवल उस 18 महीने के लघु अंतराल को छोड़—जबकि चीनी आक्रमण से उत्पन्न राष्ट्रीय अपमान से आध्यात्मिक मुक्ति पाने तथा पाकिस्तान युद्ध की दो बड़ी चिन्ताओं से राष्ट्र ग्रस्त था—देश पर उसी कल्पना का शासन अब तक जारी है।

तेईस वर्षों में क्या हुआ?

विगत 23 वर्षों में जमीन का क्या हाल हुआ? लाखों छोटे किसान साधन के अभाव में—सस्ती दर पर और समय पर मिलने वाले ऋण, सिंचाई आदि के अभाव में—बार-बार सूखा, बाढ़, अस्थिर मूल्य, प्रतिकूल बाजार-व्यवस्था, सूदखोरी आदि के शिकार होते रहने के कारण अपनी जमीन, खरीददारों की मनमानी कीमत पर, बकाया लगान, कर्ज आदि चुकाने के लिए, बेचने को बाध्य हुए हैं। दररैयत किसान और बटाईदार भूमि पर अधिकार का कोई लिखित प्रमाण न रहने के कारण व्यवस्थित रूप से बेदखल किये गये हैं। समाज के दुर्बल वर्गों के दूसरे अनगिनत लोग अपनी भूमि से, यहां तक कि वास-भूमि से भी, बलपूर्वक या धोखाधड़ी से बेदखल किये गये हैं। कानून का जो हाल है, उसमें गरीबों को शायद ही कभी न्याय मिल पाता है। कानून और व्यवस्था के पहरेदार आसानी से समाज के शक्तिशाली वर्गों द्वारा दिये गये प्रलोभनों के शिकार हो जाते हैं। इस प्रकार जमीन ली तो गयी है, लेकिन उनके द्वारा नहीं जिनके बारे में फिशर और गांधी सोच रहे थे, बल्कि जिनसे जमीन ली जाने की कल्पना गांधी ने की थी उन्होंने ही उसे हड़प लिया है।

तस्वीर का दूसरा पहलू

यह तस्वीर का केवल एक पहलू है। देश के उन हिस्सों में, जैसे बिहार में, जहां जमींदारी प्रथा के कारण सरकार के पास अद्यतन तथा विश्वसनीय भूमि-अभिलेख अब तक भी नहीं हैं, हजारों-लाखों एकड़ 'निहित' भूमि-यानी वह गैर-आबाद और गैर-बन्दोबस्त भूमि जो पहले जमींदारों के अधिकार में थी और बाद में सरकार में निहित हो गयी थी—ग्रामीण समाज के शक्तिशाली वर्गों द्वारा हड़प ली गयी है। बिहार की स्थित इतनी बुरी है कि सरकार खुद नहीं जानती है कि उसके पास निहित भूमि कितनी है और किस हद तक उस पर अतिक्रमण हुआ है। सरकारी नीतियां और आदेश ऐसे हुए हैं कि यद्यपि चुपके-चुपके गैर-कानूनी रीति से अतिक्रमण किया गया है, तथापि उसे कानून शक्ल दे दी गयी है। प्रशासन इस मामले में इतना लापरवाह और ढीला रहा है कि अगर सरकार अपनी जमीन को वापस करने के लिए कोई गंभीर प्रयास करे तो अधिकांश मामलों में उसे अदालत में जाना पड़ेगा, जहां जाल-फरेब करने वालों के ही विजयी होने की संभावना अधिक रहती है। सरकारी जमीन भूमिहीन व्यक्तियों के साथ जहां बंदोबस्त की गयी है, वहां भी वह किसी-न-किसी प्रकार गांव के शक्तिशाली लोगों द्वारा हड़प ली गयी है।

यह भूमि हड़पने वाले

भूमि हड़पने वालों की एक और भी श्रेणी है, जिसमें वे भद्र लोग आते हैं, जिनके पास अब भी वर्तमान हदबंदी कानून द्वारा निर्धारित परिसीमा से अधिक जमीन है, और जिन्होंने बेनामी और फर्जी बन्दोबस्तियां लेकर कानून को धोखा दिया है। यह शर्म की बात है कि हदबंदी कानून के अमल के फलस्वरूप एक एकड़ भूमि भी भूमिहीन व्यक्ति को अभी तक नहीं बांटी जा सकी है (सन् 1970)। और, राज्य सचिवालय

पिछले कई वर्षों से जिलाधिकारियों को अतिरिक्त भूमि का पता लगाने और उसे भूमिहीनों के बीच बांटने के लिए परिपत्र-पर-परिपत्र जारी करता रहा है।

ये परंपरागत रूप से भूमि हड़पने वाले होशियार लोग ऐसे समादरणीय व्यक्ति हैं, जिनका प्रभाव समाज में, राजनीति में, सरकार में तथा अन्य क्षेत्रों में भी है।

राजनीतिक दलों का आंदोलन

इस पृष्ठभूमि में ही साम्यवादी, संयुक्त समाजवादी तथा प्रजा समाजवादी दलों के उस आंदोलन पर विचार किया जाना चाहिए, जो निहित भूमि तथा बेनामी एवं फर्जी तौर पर बंदोबस्त की गयी भूमि पर कब्जा करने के लिए भूमिहीन लोगों को संगठित करने के लिए हो रहा है। नैतिकता के प्रश्न, कानून और व्यवस्था, लोकतांत्रिक जीवन-पद्धति आदि के प्रश्न इस संदर्भ में उठाये गये हैं। *लेकिन जब गैर-कानूनी ढंग से और चोरी-छिपे हजारों एकड़ भूमि गांव के शक्तिशाली लोगों द्वारा, जिनका उस पर कोई हक नहीं था, हड़पी और लूटी जा रही थी, उस समय तो ऐसा कोई प्रश्न नहीं उठाया गया और न भूमि हड़पने वालों के विरुद्ध शोर मचाया गया अथवा 'लोकतंत्र खतरे में' के नारे लगाये गये। उस समय अगर कुछ हुआ तो यही कि जिन राजनेताओं ने भूमि-सुधार के कानून बनाये थे और जिन अधिकारियों को उन्हें अमल में लाना था, उन्होंने आंखें बंद कर लीं और इस लूट को होने दिया; बल्कि जहां संभव हुआ, वहां स्वयं भी उन्होंने इस लूट में हिस्सा लिया।*

एक बड़े अन्याय को दुरुस्त करने का प्रयास

इसलिए आज जो लोग शेर मचा रहे हैं, उनके प्रति मेरी कोई सहानुभूति नहीं है। मैं इस प्रश्न को बिलकुल भिन्न दृष्टि से देखता हूं। मुझे लगता है कि साम्यवादी तथा समाजवादी लोग जो काम कर रहे हैं या करने जा रहे हैं, वह एक बड़े अन्याय को जनता की कार्रवाई से दुरुस्त करने का प्रयास है। यह कार्रवाई, जबतक वह खुले और शांतिपूर्ण तरीके से तथा सही ढंग से चलायी जाती है, लोकतांत्रिक जीवन-पद्धति का ही एक अंग है। इस दृष्टि से, इन दलों का भूमि-आंदोलन खोयी हुई सरकारी सम्पत्ति को वापिस लेने और अन्याय के शिकार हुए लोगों को न्याय दिलाने में सहायक सिद्ध हो सकता है। इस प्रकार सरकार को इस आंदोलन से उसकी भूमि-नीतियों के कार्यान्वयन में प्रभावशाली मदद मिल सकती है। इसलिए इस आंदोलन को कानून और भूमि पर कब्जा करने वालों के बीच मध्यस्थ के रूप में आना चाहिए और प्रत्येक मामले में न्याय-अन्याय देखकर उनके बीच मैत्रीपूर्ण समझौता कराना चाहिए। जहां ऐसा मालूम पड़े कि भूमि पर कब्जा करने वालों द्वारा अनुचित कार्रवाई की गयी हो, सरकार भूमि पर कब्जा करने वालों की मदद करे, भूमिवानों पर दबाव डाले, और चाहे वे कितने ही फर्जी कागजात और गवाह प्रस्तुत करें, उन्हें अनुचित ढंग से अधिकृत भूमि को छोड़ने के लिए राजी करे।

इस प्रकार जो भूमि प्राप्त हो, उसे ग्रामसभा की बैठक में उपस्थित भूमिहीनों की आमराय से वितरित किया जाय। भूमिहीन लोग अगर किसी आमराय पर नहीं पहुंच सकें तो चिट्ठा निकालकर अपेक्षाकृत अधिक योग्य पात्रों के बीच वितरण किया जाये।

राजनीतिक दलों को सलाह

अब दो शब्द संबंधित राजनीतिक दलों से भी कहना चाहूंगा। राजनीतिक दलों से यह अपेक्षा करना अवास्तविक होगा कि वे अपनी चुनाव-संभावनाओं की उपेक्षा करेंगे। वोट प्राप्त करना राजनीतिक दलों की मुख्य चिन्ता का विषय होना लाजिमी है। लेकिन हर बात की तरह इसकी भी एक सीमा होनी चाहिए। अगर वोट-प्राप्ति का महत्त्व लोकहित या राष्ट्रहित से ऊपर हो जाता है, तो इस क्षणिक राजनीतिक लाभ से स्थायी राष्ट्रीय क्षति हो सकती है। अतएव राजनीतिक दलों को मेरी पहली सलाह यह है कि वे 'भूमिहीनों के लिए भूमि-आंदोलन' से राजनीति को अलग रखें, चाहे वह संयुक्त शासन-पक्ष की राजनीति हो अथवा प्रतिपक्ष की। यदि वे ऐसा करते हैं, तो अलग-अलग दलीय प्रयासों को अनुबंधित करने तथा संयुक्त अभियान चलाने में कठिनाई नहीं होनी चाहिए। *पश्चिम बंगाल* में हम देख चुके हैं कि संयुक्त मोर्चे के आपसी संघर्षों का बुरा परिणाम हुआ। मोर्चे में शामिल दल जनता को भूमि दिलाने के लिए नहीं, बल्कि जनता का वोट प्राप्त करने के लिए आपस में लड़ने लगे थे। फलतः सैकड़ों राजनीतिक कार्यकर्ता एक दूसरे के हाथों मारे गये और अंततः मोर्चा ही टूट गया (सन् 1970)।

राजनीतिक दलों को मेरी *दूसरी सलाह* यह है कि वे भूमिवानों द्वारा गैरकानूनी ढंग से अधिकृत सरकारी जमीनों तथा बेनामी जमीनों के बड़े-बड़े क्षेत्रों का पता लगाने के लिए, जितने अच्छे ढंग से हो सके, जांच-पड़ताल करें। अगर गांवों से इन दलों का घनिष्ठ संबंध होगा, तो सत्य पर पहुंचने में कोई कठिनाई नहीं होगी, क्योंकि गांव-समाज में शायद ही कोई बात छिपी रहती है। जिस जमीन के बारे में जानकारी न हो या जिसके बारे में कोई संदेह अथवा विवाद हो, उस पर कोई कार्रवाई नहीं की जानी चाहिए।

मेरी *तीसरी सलाह* राजनीतिक दलों को यह है कि कार्रवाई शुरू करने के पहले संबंधित भूमिवानों को अपनी गलती सुधारने का मौका देना चाहिए। दलों के नेता भूमिवानों से मिलें और उनसे तर्कपूर्वक निवेदन करें तथा अन्य प्रकार से उन्हें समझाने का प्रयास करें कि अनुचित ढंग से अधिकृत भूमि का वे परित्याग कर दें। जब समझाने-बुझाने की प्रक्रिया विफल हो जाय, तभी जनता की कार्रवाई शुरू की जानी

चाहिए, लेकिन भूमिवानों को तथा प्रशासन को समुचित सूचना देने के बाद। कार्रवाई शुरू करने के पहले जनमत को सूचित और शिक्षित करना तथा इलाके के छोटे और ऐसे बड़े किसानों का समर्थन प्राप्त करना भी आवश्यक है, जिन्होंने संभव है सरकारी भूमि पर अतिक्रमण न किया हो या भूमिसुधार कानूनों को धोखा न दिया हो अथवा अनुचित ढंग से अधिकृत भूमि को छोड़ने के लिए राजी हो गये हों।

मेरी अंतिम सलाह यह है कि भूमि का वितरण करते समय राजनीतिक दल अपने समर्थकों का पक्षपात करने की कोशिश न करें, क्योंकि ऐसा करने से न केवल किसी के साथ अन्याय हो जा सकता है, बल्कि बंगाल की तरह प्रारम्भिक गृह-युद्ध की स्थिति पैदा हो जा सकती है। जैसा कि मैंने ऊपर कहा है, वितरण, खासतौर से इसी हेतु बुलायी गयी, ग्रामसभा की बैठक में उपस्थित भूमिहीन व्यक्तियों की आमराय से, होना चाहिए। भूमिहीनों के बीच मतभेद होने की स्थिति में, चिट्ठा निकालकर इस प्रश्न को हल करना चाहिए। इस प्रकार जो निर्णय हों, उन पर बाद में प्रशासन की मुहर लगनी चाहिए और जिन भूमिहीनों को भूमि दी गयी हो, उन्हें आवश्यक प्रमाणपत्र दिये जाने चाहिए।

हिंसा का सामना अहिंसा से

यह सारी प्रक्रिया शांतिपूर्ण ढंग से चलाने की आवश्यकता एक ऐसी बुनियादी बात है जिसे ऊपर दी गयी सलाह के रूप में शामिल करना मैंने जरूरी नहीं समझा। आंदोलन का सारा औचित्य ही समाप्त हो जाता है, जब राजनीतिक दल या भूमिहीन लोग हिंसा पर उतर आते हैं। भूमिवानों की ओर से एवं प्रशासन की ओर से हिंसा हो सकती है। परंतु राजनीतिक दलों तथा संबंधित लोगों को उस हिंसा का सामना शांतिपूर्वक एवं अनुशासनपूर्वक करना है। इस प्रकार के सत्याग्रह में आत्मरक्षा के लिए हिंसा करने के अधिकार का आवाहन नहीं किया जा सकता।

इस संदर्भ में यह जानकर बड़ी चिन्ता होती है कि साम्यवादी दल, लोगों से अपनी सभाओं और जुलूसों में केवल लाठी के साथ नहीं, बल्कि भाला, बर्छा, तलवार आदि से लैस होकर आने के लिए कह रहा है। लगता है, ये हथियार वे लोग भी साथ ले जाते हैं जिनको यह दल जमीन पर कब्जा करने के लिए ले जाता है (सन् 1970)। इस प्रकार की कार्रवाई हिंसा के खुला निमंत्रण है और इसे लोकतांत्रिक जन-आंदोलन की संज्ञा नहीं दी जा सकती। *आश्चर्य की बात तो यह है कि बिहार में सत्ताधारी दल के साथ इस दल का गठबंधन होने के बावजूद वह इस प्रकार की कार्रवाई में संलग्न है। इस राज्य के लिए और इस देश के लिए वह बुरा दिन होगा, जब लोकतांत्रिक अधिकारों का उपयोग इस प्रकार से लोकतंत्र को समाप्त करने के लिए किया जायेगा। सामयवादी दल का अगर यह आचरण जारी रहा तो जनता का समर्थन वह खो देगा।*

मेरा समर्थन है, लेकिन...

यदि राजनीतिक दल इन सलाहों को मानते हैं और उपर्युक्त शर्तों का पालन करते हैं तो उनके आंदोलन का समर्थन करने में मुझे हिचक नहीं होगी। लेकिन उसमें मेरे सम्मिलित होने या प्रमुख भाग लेने का, जैसा कुछ लोगों ने निजी तौर पर सुझाव दिया है, कोई प्रश्न नहीं हो सकता। क्योंकि, *मैं एक ऐसे आंदोलन में घनिष्ठ रूप से संलग्न हूं जो भूमि के वितरण और दलीय लोकप्रियता हासिल करने के प्रश्न से बहुत आगे है।* जमीन बांटने के अलावा मेरे इस आंदोलन का लक्ष्य है : (क) ग्रामीण समाजों को पुनः संगठित और पुष्ट करना जिससे वे आत्मनिर्भर, सहभागी लोकतंत्र का रूप ले सकें; (ख) भूमि के व्यक्तिगत स्वामित्व को सामुदायिक स्वामित्व में परिवर्तित करना; और (ग) आमदनी, उपज तथा श्रम के पारस्परिक वितरण की परम्परा शुरू करना जिससे समाज का एकीकरण हो सके और वह आत्मविकास के लिए साधनों का निर्माण कर सके। जब तक इस ढंग से ग्रामीण समाजों का पुनर्निर्माण स्वशासी, परस्पर-सहयोगी, आत्मनिर्भर निकायों के रूप में नहीं होता, तब तक दुर्बल वर्गों की क्षति होती रहेगी और वे असुरक्षित बने रहेंगे। अगर समाज में सत्ता का वर्तमान असंतुलन कायम रहता है तो जमीन आज बांट भी दी जायेगी तो कल छीन ली जायेगी। दुर्बल जनों को प्रदान किये गये अन्य अधिकारों का भी यही हश्र होगा। इस असंतुलन का निराकरण 'बांटकर खाने वाले समाज' में ही ग्रामसभा के रूप में सहभागी लोकतंत्र की प्रक्रिया से, हो सकता है। प्राथमिक समुदाय के स्तर पर समस्या का निदान वर्ग-चेतना और वर्ग-संघर्ष नहीं हो सकता। जातिगत एवं अन्य वफादारियां, जिनमें दलीय वफादारियां भी शामिल हैं, वर्गगत वफादारियों को आड़े काटकर निःसत्त्व बना देती हैं। ऐसे विभाजित समाज में जो स्वयं के साथ युद्धरत है, दुर्बल जन क्षतिग्रस्त होते ही रहेंगे। एकीकृत समाज में ही सभी वर्ग लाभान्वित हो सकते हैं और दुर्बल वर्ग सामुदायिक अभिक्रम के द्वारा आगे बढ़ने की उम्मीद कर सकते हैं।

ग्राम-स्वराज्य आंदोलन का रूप अभी हाल तक गांवों से ग्रामदान का संकल्प प्राप्त करने तक सीमित रहा है। इस राज्य के 80 प्रतिशत गांवों से ग्रामदान का संकल्प प्राप्त कर चुकने के बाद अब हमलोग उन संकल्पों को कार्यान्वित कराने में लगे हुए हैं। मैं मानता हूं कि यह कार्य राजनतिक दलों के भूमि आंदोलन से अधिक महत्त्व का है। अंत में मैं यह कहना चाहूंगा कि शांतिपूर्ण समाज-परिवर्तन में विश्वास रखने वाले दलों से भी इस ग्राम-स्वराज्य आंदोलन को जो सहयोग मिलना चाहिए, वह उनसे नहीं मिल सका है, और यह बड़े दुःख का विषय है।

(पटना, 4 अगस्त, 1970) ❑

विनम्र श्रद्धांजलि

चला गया पानी का असली पहरेदार

❑ मनीष वैद्य

तब देश में पानी और पर्यावरण को लेकर इतनी बातें और आज की तरह का सकारात्मक माहौल नहीं था, और न ही सरकारों की विषय सूची में पानी और पर्यावरण की फिक्र थी, उस माहौल में एक व्यक्तित्व उभरा जिसने पूरे देश में न सिर्फ पानी की अलख जगायी बल्कि समाज के सामने सूखी जमीन पर पानी की रजत बूंदों का सैलाब बनाकर भी दिखाया। वे देश में पानी के पहले पहरेदार रहे, जिन्होंने हमें पानी का मोल समझाया।

वह शख्सियत थी प्रसिद्ध गांधीवादी विचारक अनुपम मिश्र की। अब वे हमारे बीच नहीं रहे लेकिन उनके दिखाये रास्ते पर चलकर पानी और पर्यावरण की लड़ाई अब बहुत आगे बढ़ गयी है। अनुपम जी पहले पहरेदार थे पर उन्होंने अब देश में अपनी जीवटता से हजारों-लाखों पहरेदार खड़े कर दिये हैं। इकहरे बदन के अनुपम मिश्र को पानी के असाधारण कामों के लिए कई बड़े पुरस्कार मिले लेकिन उनका सबसे बड़ा पुरस्कार शायद यही था कि उनके अपने जीवनकल में ही पानी का काम लगातार विस्तारित होता गया और आज इस दिशा में लाखों लोग पूरी शिद्दत से जुटे हैं। अब सरकारों ने भी इस पर ध्यान देना शुरू किया है। सरकारों में इसके लिए मंत्रालय बनाये गये हैं।

उत्तराखंड में चिपको आंदोलन शुरू हुआ तो युवा अनुपम ने वहां जंगलों को बचाने के लिए आंदोलन की मुख्यधारा में काम किया।

इसी दौरान उनका ध्यान पानी के लिए त्राहि-त्राहि करते राजस्थान के कुछ हिस्सों की ओर गया। उन्होंने सूखाग्रस्त अलवर को अपना पहला लक्ष्य बनाया। तब तक अलवर जिले के कई हिस्से कम बारिश और भूमिगत जलस्तर कम होने की वजह से अकाल की स्थिति में थे।

यहां लोगों को पीने का पानी भी दूर-दूर से लाना पड़ता था। लोग पानी को लेकर पूरी तरह निराश और भगवान भरोसे होकर इसे अपनी किस्मत मान चुके थे, लेकिन अनुपम भाई को विश्वास था कि इस रेत से भी पानी उपजाया जा सकता है और उन्होंने वह कर दिखाया। शुरुआत में स्थानीय लोग इसे असंभव मानकर उनसे दूर ही रहे पर बाद में तो ऐसा कारवां जुटा कि उन्होंने यहां की सूखी अल्वरी नदी को जिन्दा करने की भीष्म प्रतिज्ञा कर डाली। उन दिनों यह आग में बाग लगा देने जैसी बात थी लेकिन पानी के पहरेदार को प्रकृति पर पूरा भरोसा था। काम शुरू हुआ और नदी में बरसों बाद फिर कल-कल का संगीत गूंज उठा।

इसी तरह राजेन्द्र सिंह के तरुण भारत संघ के साथ लम्बे वक्त तक जुड़े रहकर उन्होंने लापोड़िया को देश के नक्शे पर पानी के महत्त्वपूर्ण काम के लिए रेखांकित कराया। देश में पानी को लेकर जहां भी अच्छे काम की शुरुआत हुई, करीब-करीब स्थानों पर उनकी मौजूदगी प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रही। शुरुआती दौर के देशभर में पानी का काम करने वाले ऐसे बहुत कम लोग होंगे, जो कहीं न कहीं, किसी न किसी रूप में अनुपम भाई के काम और उनके नाम से वाकिफ न रहे हों। राजस्थान में उनके काम को देखने जाना जल-तीर्थ की तरह हुआ करता था।

बात करीब नब्बे के दशक की है, मेरे शहर देवास में भयावह जल संकट आया। लोग बाल्टी-बाल्टी पानी के लिए मोहताज हो गये। शहर और उसके आसपास कहीं पानी नहीं बचा। हालात इतने दुर्गम हो गये कि पीने के लिए पानी भी ट्रेन की वैगनों से आने लगा। उन्हीं दिनों पहली बार मेरे युवा मन पर पानी के लिए भटकते लोगों की आर्तनाद पर ऐसी ज़मीं कि मैं आज तक उसे भूल नहीं पाता। खुद हमें अपने परिवार के लिए दूर-दूर से साइकिलों पर केन टांगकर पानी लाना पड़ रहा था। जिस दिन दो घड़े पानी नहीं मिलता, हम सिहर उठते। मैंने पहली बार वहीं से पानी और पर्यावरण पर लिखना शुरू किया। कुछ जन संगठनों के साथ पानी के लिए जमीनी काम करना शुरू किया तो अनुपम भाई के काम की अक्सर चर्चा हुआ करती। इसी दौरान उन्हें लगातार पढ़ते भी

रहे। उनके संपादन में आने वाली गांधी मार्ग में उनके संपादकीय और लेख पानी की चिन्ता से हमें भर देते तो इससे निजात की युक्ति भी सुझाते। पत्र-पत्रिकाओं में उनके आलेख पढ़ते और उन पर आपस में लंबी बातें होती।

इसी दौरान बहुत संकोच के साथ देवास में पानी की स्थिति को लेकर मैंने उन्हें एक चिट्ठी लिखी। मुझे लगा भी कि इतने बड़े कद के व्यक्ति को मुझ जैसे अदने आदमी की चिट्ठी पढ़ने का वक्त भी मिलेगा या नहीं। लेकिन उसके 15 दिनों में ही एक बड़ा सा लिफाफा लेकर डाकिये ने दस्तक दी। प्रेषक में उनका नाम देखकर जितनी खुशी हुई, उसे शब्दों में व्यक्त करना कठिन है। मेरे लिए तो यह आसमान छूने जैसी बात थी। लिफाफे में उनकी तब ताजा प्रकाशित किताब आज भी खरे हैं तालाब की एक प्रति थी और साथ में उनके हाथों से लिखा पत्र। पत्र में उन्होंने पानी को लेकर लंबा मजमून लिखा था। उन्होंने मेरे यहां-वहां छपे आलेख का भी जिक्र किया तो मेरे लिए यह अनुपम भाई का पहला स्नेह था और इस तरह मैंने पहली बार उस विराट व्यक्तित्व की पहली उदारमना झलक देखी थी। बाद में तो कई बार उनका स्नेह और मार्गदर्शन मिलता रहा।

वे पानी के परंपरागत जल स्रोतों के रख-रखाव पर समाज के उत्तरदायित्व को जरूरी मानते थे। उनके मुताबिक बारिश के पानी को तालाबों और परंपरागत जल स्रोतों में सहेजकर ही हम इसे बचा सकते हैं, इससे बाढ़ से निजात मिली है औरप धरती के पानी का खजाना भी बचा रह सकता है।

उन्होंने इसे लेकर शिद्दत से अपने नायाब कामों के जरिए समाज के बीच रखा।

अब उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि यही होगी कि हम पानी कीमत पहचाने और पानी को सहेजने की परंपरा को पुनर्जीवित कर सकें। ❑

पुष्पांजलि

यह संसार प्रकृति के नियमों के अधीन हैं, और परिवर्तन एक नियम है, शरीर तो मात्र एक साधन है।

सेवाग्राम आश्रम प्रतिष्ठान, वर्धा की ओर से अनुपम मिश्र जी को भावपूर्ण श्रद्धांजलि!! **–जयवंत मठकर**

अध्यक्ष, सेवाग्राम आश्रम प्रतिष्ठान, वर्धा

× × ×

अनुपमजी जैसे समर्पित, गहरे अध्ययनकर्ता तथा जमीनी सक्रिय कार्यकर्ता का जाना हम सबके लिए खेदजनक तो है ही, पर उससे ज्यादा जब पर्यावरण का अंधाधुंध दोहन स्वार्थ के लिए होता हो, उस काल में उनका जाना मानव और सृष्टि के लिए कितना अपूरणीय क्षतिकारक है, यह हम सभी समझते हैं।

पर, प्रकृति के नियम के आगे सभी नतमस्तक हैं। अखिल भारतीय नयी तालीम समिति इस दुख की घड़ी में सभी के साथ अपनी गहरी संवेदनाएं व्यक्त कर, उन्हें भावपूर्ण श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

–डॉ. सुगन बरंठ,

अध्यक्ष, नई तालीम समिति, वर्धा

× × ×

अनुपम भाई के आकस्मिक निधन से मुझे गहरा धक्का लगा है। अनुपम भाई का पर्यावरण संरक्षण में बड़ा योगदान रहा है।

सर्वोदय समाज की ओर से मैं उनके देहावसान पर गहरी संवेदना व्यक्त करता हूं और ईश्वर से प्रार्थना करता हूं कि दिवंगत आत्मा को शांति प्रदान करे।

–आदित्य पटनायक

संयोजक, सर्वोदय समाज

आओ बहस करें

❑ **श्याम बहादुर 'नम्र'**

आओ, बहस करें
सिद्धांतों की तहस-नहस करें।
आओ बहस करें,

बहस करें,
चढ़ती हुई महंगाई पर,
विषमता की बढ़ती हुई खाईं पर।

बहस करें, भुखमरी, कुपोषण पर,
बहस करें, लूट-दमन-शोषण पर,
बहस करें, पर्यावरण-प्रदूषण पर।
बहस करें, शिक्षा की नयी दिशा पर,
कला व साहित्य की विधा पर।

काफी हाउस के किसी कोने में,
मजा आता है बहस होने में।

आज की शाम बहस में काटें,
कोरे शब्दों से सबका दुःख बांटें।
एक-दूसरे का भेजा चाटें,
अथवा उसमें भूसा भरें।

आओ, बहस करें,
सिद्धांतों की तहस-नहस करें! ❑

श्रद्धांजलि

बड़े गौर से सुन रहा था जमाना तुम्हीं सो गये दास्तां कहते कहते

❑ महादेव विद्रोही

19 दिसंबर, 2016। सह्याद्री एक्सप्रेस कोल्हापुर पहुंचती है। मैं उतर कर जिला सर्वोदय मंडल के कार्यालय की ओर जा रहा हूं। बीच में ही फोन की घंटी बजती है। 'हलो'

'महादेव भाई, गजब हो गया' फोन पर श्री बसंत जी थे। मैं आशंकित हो गया।

'क्या हुआ?'

''अनुपम भाई नहीं रहे। सबेरे करीब 5.40 बजे अखिल भारत आयुर्विज्ञान संस्थान में उन्होंने आंखें मूंद ली।''

मैं अवाक रह गया। आगे कुछ बोल नहीं सका। जिला सर्वोदय मंडल कार्यालय पहुंच कर तुरंत सभी मित्रों को इसकी जानकारी दी।

दोपहर में अनुपम भाई की अंतिम यात्रा निकलने वाली थी। कोल्हापुर में कोई विमान सेवा नहीं है। अतः अंतिम दर्शन के लिए भी जाना संभव नहीं हो सका। अनुपम भाई की अस्वस्थता की जानकारी तो थी। वे कैंसर से पीड़ित थे। कुछ महीने पहले मिला तो उन्होंने बताया कि अब स्वास्थ्य सुधर रहा है। इस जानकारी से मन में प्रसन्नता हुई पर वे इतनी जल्दी हमसे बिदा हो जायेंगे, उसकी कोई कल्पना नहीं थी।

श्री अनुपम मिश्र का जन्म 19 दिसंबर, 1948 को सेवाग्राम में श्री भवानी प्रसाद मिश्र के घर हुआ। भवानी भाई को कौन नहीं जानता। आपात्काल के विरोध में वे प्रतिदिन तीन कविताएं लिखते थे। उनका गीत—चलो गीत गाओ-चलो गीत गाओ, गा-गा के दुनिया को सिर पर उठाओ—हम बड़े फख्र के साथ गाते हैं।

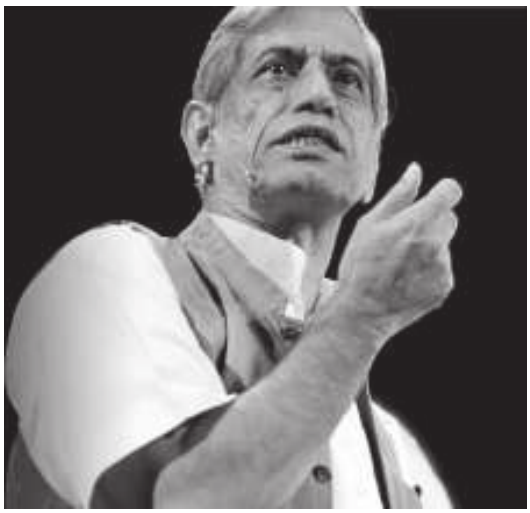

14-16 अप्रैल, 1972 को चम्बल के 500 से अधिक बागियों ने जेपी के सामने आत्मसमर्पण किया। इस पूरी घटना को श्री अनुपम मिश्र तथा श्री श्रवण कुमार गर्ग ने शब्दों में संजोया। नाम है—'चम्बल की बंदूकें गांधी के चरणों में'। तब से अनुपम भाई को जानता हूं।

एक प्रदर्शनी आयोजित की थी। उस परिसंवाद का उद्घाटन श्री सुंदरलाल बहुगुणा ने किया था।

1982 में अनुपम जी ने 'देश का पर्यावरण' नाम से देश के पर्यावरण की स्थिति का जीवंत तस्वीर प्रस्तुत किया। वह हिन्दी के पाठकों के लिए एक प्रामाणिक दस्तावेज है।

1988 में अनुपम जी ने 'हमारा पर्यावरण' का संपादन किया। यह 'देश का पर्यावरण' की अगली कड़ी थी।

इन पुस्तकों ने देश और दुनिया का ध्यान अनुपम जी के पर्यावरण संबंधी ज्ञान की ओर बरबस आकृष्ट किया।

1993 में अनुपम जी कीं 'आज भी खरे हैं तालाब' पुस्तक प्रकाशित हुई। इस पुस्तक ने गांवों के अनपढ़ एवं गंवार माने जाने वाले लोगों के जल-संरक्षण के ज्ञान एवं कला का बड़ी ही संजीदगी से चित्रण किया। यह पुस्तक इतनी अधिक लोकप्रिय हुई कि 19 भाषाओं में इसका अनुवाद हुआ, जिसमें अरबी, फ्रेंच भाषा एवं ब्रेल लिपि भी शामिल है। इसकी लाखों प्रतियां प्रकाशित हो चुकी हैं।

जल-संरक्षण पर अनुपम जी की दूसरी अनुपम पुस्तक है—'राजस्थान की रजत बूंदे'। इन दोनों पुस्तकों ने लोक विद्या की पुनः प्रतिष्ठा में बहुत ही महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है।

2007 में श्री अनुपम मिश्र को अमर शहीद चंद्रशेखर आजाद राष्ट्रीय पुरस्कार, 2011 में जमनालाल बजाज पुरस्कार आदि अनेक सम्मानों एवं पुरस्कारों से नवाजा गया।

अनुपम भाई लम्बे समय से 'गांधी मार्ग' (हिन्दी) के संपादक थे। उनकी कुशल लेखनी एवं सुदीर्घ चिन्तन ने 'गांधी मार्ग' के हर अंक को संग्रहणीय बना दिया।

आज जब अनुपम भाई नहीं हैं, तब क्या हम ग्रामीण भारत के लोक विद्याओं को आगे बढ़ाने के उनके प्रयत्नों में सहभागी बनेंगे?

अनुपम भाई आज मेरे पास आपके श्रद्धांजलि के लिए शब्द नहीं हैं, सिर्फ इतना कहूंगा—

बड़े गौर से सुन रहा था जमाना,
तुम्हीं सो गये दास्तां कहते-कहते।

आज जब भारत और दुनिया तथाकथित विकास के अंधे दौड़ में सरपट भागी जा रही है, हमें लोगों को गांधी के इस वाक्य को बार-बार स्मरण करना होगा—'यह धरती हरेक की आवश्यकताओं को पूरा कर सकती है, लेकिन किसी एक की भी लालच को नहीं। ❑

विरासत

तालाब कैसे बनायें?

❑ अनुपम मिश्र

एक एक्टिविस्ट से जर्नलिस्ट अनुपम जी की प्रेरणा से ही बना। 1974 में खादीग्राम जमुई में जेपी के इर्द-गिर्द हम सब उपस्थित हुए थे। उन्होंने अपने कंधे से लटके जर्नलिस्ट किट मेरे गले में डालकर मुझे जैसे एक उस्ताद ने गंडा बांधकर अपना दोस्त और शिष्य बना लिया हो। गुरु वंदन के रूप में अनुपमजी का स्मरण कराता 'तालाब कैसे बनायें' आलेख यहां प्रस्तुत है, जो उनकी अनुपम कृति है, जिसमें न केवल समाज, मनुष्य और संस्कृति का गुणगान है; अपितु तालाब कैसे एक वैज्ञानिक तकनीक और अभ्यास पर आधारित है, उसका अद्‌भुत वर्णन है। हृदय से पढ़ें तो लगेगा कि एक कविता ही पढ़ रहे हैं, जैसे विज्ञान भी सरस पानी की तरह बह चला है।
हर बड़े उस्ताद की तरह इनकी भी सीख एक है—अभ्यास से अभ्यास बढ़ता है। अनुपमजी सदा अपने तालाब की तरह अमर खड़े रहेंगे। उन्हें विनम्र श्रद्धांजलि! **–सं.**

आज अनपूछी ग्यारस है। देव उठ गये हैं। अब अच्छे-अच्छे काम करने के लिए किसी से कुछ पूछने की, मुहुर्त दिखवाने की जरूरत नहीं है। फिर भी सब लोग मिल-जुल रहे हैं, सबसे पूछ रहे हैं। एक नया तालाब जो बनने वाला है।...

पाठकों को लगेगा कि अब उन्हें एक तालाब के बनने का—पाल बनने से लेकर पानी भरने तक का पूरा विवरण मिलने वाला है। हम खुद ऐसा विवरण खोजते रहे पर हमें वह कहीं मिल नहीं पाया। जहां सदियों से तालाब बनते रहे हैं, हजारों की संख्या में बने हैं—वहां तालाब बनाने का पूरा विवरण न होना शुरू में अटपटा लग सकता है, पर यही सबसे सहज स्थिति है 'तालाब कैसे बनायें' के बदले चारों तरफ 'तालाब ऐसे बनायें' का चलन चलता था। फिर भी छोटे-छोटे टुकड़े जोड़ें तो तालाब बनाने का एक सुंदर न सही, काम चलाऊ चित्र तो सामने आ ही सकता है।

...अनपूछी ग्यारस है। अब क्या पूछना है। सारी बातचीत तो पहले हो ही चुकी है। तालाब की जगह भी तय हो चुकी है। तय करने वालों की आंखों में न जाने कितनी बरसातें उतर चुकी हैं। इसलिए वहां ऐसे सवाल नहीं उठते कि पानी कहां से आता है, कितना पानी आता है, उसका कितना भाग कहां पर रोका जा सकता है। ये सवाल नहीं हैं, बातें हैं सीधी-सादी, उनकी हथेलियों पर रखी। इन्हीं में से कुछ आंखों ने इससे पहले भी कई तालाब खोदे हैं। और इन्हीं में से कुछ आंखें ऐसी हैं जो पीढ़ियों से यही काम करती आ रही हैं।

ये तो दसों दिशाएं खुली हैं, तालाब बनाने के लिए, फिर भी जगह का चुनाव करते समय कई बातों का ध्यान रखा गया है। गोचर की तरफ है यह जगह। ढाल है, निचला क्षेत्र है। जहां से पानी आयेगा, वहां की जमीन मुरुम वाली है। उस तरफ शौच आदि के लिए भी लोग नहीं जाते हैं। मरे जानवरों की खाल वगैरह निकालने की जगह यानी हड़वाड़ा भी इस तरफ नहीं है।

अभ्यास से अभ्यास बढ़ता है। अभ्यस्त आंखें बातचीत में सुनी-चुनी गयी जगह को एक बार देख भी लेती हैं। यहां पहुंचकर आगौर, जहां से पानी आयेगा, उसकी साफ-सफाई, सुरक्षा को पक्का कर लिया जाता है। अगर, जहां पानी आयेगा, उसका स्वभाव परख लिया जाता है। पाल कितनी ऊंची होगी, कितनी चौड़ी होगी, कहां से कहां तक बंधेगी तथा तालाब में पानी पूरा भरने पर उसे बचाने के लिए कहां से अपरा बनेगी, इसका भी अंदाज ले लिया गया है।

सब लोग इकट्ठे हो गये हैं। अब देर काहे की। चमचमाती थाली सजी है।सूरज की किरणें उसे और चमका रही हैं। जल से पूर्ण लोटा है। रोली, मौली, हल्दी, अक्षत के साथ रखा है लाल मिट्टी का एक पवित्र इला। भूमि और जल की स्तुति के श्लोक धीरे-धीरे लहरों में बदल रहे हैं।

वरुण देवता का स्मरण है। तालाब कहीं भी खुद रहा हो, देश के एक कोने से दूसरे कोने तक की नदियों को पुकारा जा रहा है। श्लोकों की लहरें थमती हैं, मिट्टी में फावड़ों के टकराने की खड़खड़ाहट से। पांच लोग पांच परात मिट्टी खोदते हैं, दस हाथ परातों को उठाकर पाल पर डालते हैं। यहीं बंधेगी पाल। गुड़ बंट जाता है। महूरत साध लिया जाता है। आंखों में बसा तालाब का पूरा चित्र फावड़े से निशान लगाकर जमीन पर उतार लिया गया है। कहां से मिट्टी निकलेगी और कहां-कहां डाली जायेगी, पाल से कितनी दूरी पर खुदाई होगी ताकि पाल के ठीक नीचे इतनी गहरी न हो जाये कि पाल पानी के दबाव से कमजोर होने लगे।...

अनपूछी ग्यारस को इतना तो हो ही जाता था। लेकिन किसी कारण उस दिन काम शुरू नहीं हो पाये तो मुहुर्त पूछा जाता था, नहीं तो और कई बातों के साथ कुआं, बावड़ी और तालाब बनाने का मुहुर्त आज भी समझाते हैं : ''हस्त, अनुराधा, तीनों उत्तरा, शतभिषा, मघा, रोहिणी, पुष्य, मुगशिरा, पूष नक्षत्रों में चंद्रावर, बुधवार, बृहस्पतिवार तथा शुक्रवार को कार्य प्रारंभ करें। परंतु तिथि 4, 9 और 14 का त्याग करें। शुभ लगनों में गुरू और बुध बली हो, पाप ग्रह निर्बल हो, शुक्र का चन्द्रमा जलचर राशिगत लगन व चतुर्थ हो, गुरु शुक्र अस्त न हो, भद्रा न हो तो खुदवाना शुभ है।''

आज हममें से ज्यादा लोगों को इस विवरण में से दिनों के कुछ नाम भर समझ में आ पायेंगे, पर आज भी समाज के एक बड़े भाग के मन की घड़ी इस घड़ी से मिलती है। कुछ पहले तक तो पूरा समाज इसी घड़ी से चलता था।

...घड़ी साध ली गयी है। लोग वापस लौट रहे हैं। अब एक या दो दिन बाद जब भी सबको सुविधा होगी, फिर से काम शुरू होगा।

अभ्यस्त निगाहें इस बीच पलक नहीं झपकतीं। कितना बड़ा है तालाब, काम कितना है, कितने लोग लगेंगे, कितने औजार, कितने मन मिट्टी खुदेगी, पाल पर कैसे डलेगी मिट्टी? तसलों से, बहंगी से, लग्गे से ढोई जायेगी या गधों की जरूरत पड़ेगी? प्रश्न लहरों की तरह उठते हैं। कितना काम कच्चा है, मिट्टी का है, कितना है पक्का, चूने का, पत्थर का। मिट्टी का कच्चा काम बिलकुल पक्का करना है और पत्थर, चूने का पक्का काम कच्चा न रह जाये। प्रश्नों की लहरें उठती हैं और अभ्यस्त मन की गहराई में शांत होती जाती हैं। सैकड़ों मन मिट्टी का बेहद वजनी काम है। बहते पानी को रुकने के लिए मनाना है। पानी से, हां आगे से खेलना है।

डुगडुगी बजती है। गांव तालाब की जगह पर जमा होता है। तालाब पर काम अमानी में चलेगा। अमानी यानी सब लोग एक साथ काम पर आयेंगे, एक साथ वापस घर लौटेंगे।

सैकड़ों हाथ मिट्टी काते हैं। सैकड़ों हाथ पाल पर मिट्टी डालते हैं। धीरे-धीरे पहला आसार पूरा होता है, एक स्तर उभरकर दिखता है। फिर उसकी दबाई शुरू होती है। दबाने का काम नंदी कर रहे हैं। चार नुकीले खुरों पर बैल का पूरा वजन पड़ता है। पहला आसार पूरा हुआ तो उस पर मिट्टी की दूसरी तह डलनी शुरू होती है। हरेक आसार पर पानी सींचते हैं, बैल चलाते हैं। सैकड़ों हाथ तत्परता से चलते रहते हैं, आसार बहुत धीरज के साथ धीरे-धीरे से उठते जाते हैं।

अब तक जो कुदाल की एक अस्पष्ट रेखा थी, अब वह मिट्टी की पट्टी बन गयी है। कहीं यह बिलकुल सीधी है तो कहीं यह बल खा रही है, अगौर से आने वाला पानी जहां पाल पर जोरदार बल आजमा सकता है, वहीं पर पाल में भी बल दिया गया है। इसे 'कोहनी' भी कहा जाता है। पाल यहां ठीक हमारी कोहनी की तरह मुड़ जाती है।

जगह गांव के पास ही है तो भोजन करने लोग घर जाते हैं। जगहर दूर हुई तो भोजन भी वहीं पर। पर पूरे दिन गुड़ मिला मीठा पानी सबको वहीं मिलता है। पानी का काम है, पुण्य का काम है, इसमें अमृत जैसा मीठा पानी पिलाना है, तभी अमृत जैसा सरोवर बनेगा।

इस अमृतसर की रक्षा करेगी पाल। वह तालाब की पालक है। पाल नीचे कितनी चौड़ी होगी, कितनी ऊपर उठेगी और ऊपर की चौड़ाई कितनी होगी—ऐसे प्रश्न गणित या विज्ञान का बोझ नहीं बढ़ाते। अभ्यस्त आंखों के सहज गणित को कोई नापना ही चाहे तो नींव की चौड़ाई होगी आधी और पूरी बन जाने पर ऊपर की चौड़ाई कुल ऊंचाई की आधी होगी।

मिट्टी का कच्चा काम पूरा हो रहा है। अब पक्के काम की बारी है। चुनकरों ने चूने को बुझा लिया है। गरट लग गयी है। अब गारा तैयार हो रहा है। सिलावट पत्थर की टकाई में व्यस्त हो गये हैं। रक्षा करने वाली पाल की भी रक्षा करने के लिए नेष्टा बनाया जायेगा। नेष्टा यानी वह जगह जहां से तालाब का अतिरिक्त पानी पाल को नुकसान पहुंचाए बिना बह जायेगा। कभी यह शब्द 'निसृष्ट' या 'निस्तारण' या 'निस्तार' रहा होगा। तालाब बनाने वालों की जीभ से कटते-कटते यह घिस कर 'नेष्टा' के रूप में इतना मजबूत हो गया कि पिछले कुछ सैकड़ों वर्षों से इसकी एक भी मात्रा टूट नहीं पायी है।

नेष्टा पाल की ऊंचाई से थोड़ा नीचा होगा। तभी तो पाल को तोड़ने से पहले ही पानी को बहा सकेगा। जमीन से इसकी ऊंचाई, पाल की ऊंचाई के अनुपात में तय होगी। अनुपात होगा कोई 10 और 7 हाथ का।

पाल और नेष्टा का काम पूरा हुआ ओर इस तरह बन गया तालाब का आगर। आगौर का सारा पानी आगर में सिमट कर आयेगा। अभ्यस्त आंखें एक बार फिर आगौर और आगर को तौलकर देख लेती हैं। आगर की क्षमता आगौर से आने वाले पानी से कहीं अधिक तो नहीं, कम तो नहीं। उत्तर हां में नहीं आता।

आखिरी बार डुगडुगी पिट रही है। काम तो पूरा हो गया पर आज फिर सभी लोग इकट्ठे होंगे, तालाब की पाल पर। अनपूछी ग्यारस को जो संकल्प लिया था, वह आज पूरा हुआ है। बस आगौर में स्तम्भ लगना और पाल पर घटोइया देवता की प्राण प्रतिष्ठा होना बाकी है। आगर के स्तम्भ पर गणेश जी बिराजे हैं और नीचे हैं सर्पराज। घटोइया बाबा घाट पर बैठ कर पूरे तालाब की रक्षा करेंगे।

आज सबका भोजन होगा। सुंदर मजबूत पाल से घिरा तालाब दूर से एक बड़ी थाली की तरह ही लग रहा है। जिन अनाम लोगों ने इसे बनाया है, आज वे प्रसाद बांट कर इसे एक सुंदर-सा नाम भी देंगे। और यह नाम किसी कागज पर नहीं, लोगों के मन पर लिखा जायेगा।

लेकिन नाम के साथ काम खत्म नहीं हो जाता है। जैसे ही हथिया नक्षत्र उगेगा, पानी का पहला झला गिरेगा, सब लोग फिर तालाब पर जमा होंगे। अभ्यस्त आंखें आज ही तो कसौटी पर चढ़ेंगी। लोग कुदाल, फावड़े, बांस और लाठी लेकर पाल पर घूम रहे हैं। खूब जुगत से एक-एक आसार उठी पाल भी पहले झरने का पानी पिये बिना मजबूत नहीं होगी। हर कहीं से पानी धंस सकता है। दरारें पड़ सकती हैं। चूहों के बिल बनने में भी कितनी देरी लगती है भला! पाल पर चलते हुए लोग बांसों से, लाठियों से इन छेदों को दबा-दबाकर भर रहे हैं।

कल जिस तरह पाल धीरे-धीरे उठ रही थी, आज उसी तरह आगर में पानी उठ रहा है। आज वह पूरे आगौर से सिमट-सिमट कर आ रहा है :—

सिमट-सिमट जल भरहि तलावा।
जिमी सद्गुण सज्जन पहिं आवा।।

अनाम हाथों की मनुहार पानी ने स्वीकार कर ली। (साभार 'आज भी खरे हैं तालाब') ❑

दृष्टि और सृष्टि

पानी पर संकीर्णवादी सोच

❑ चिन्मय मिश्र

हम एक ऐसी संस्कृति के वारिस हैं जहां पानी को कभी निजी सम्पत्ति नहीं समझा गया एवं हथियार बनाकर इस्तेमाल नहीं किया गया। यही अपेक्षा हमें आज भी स्वयं से रखना चाहिए।... दुनिया का कोई भी धर्म या विचार पानी को लेकर संकीर्णवादी सोच नहीं रखता। हम भारतीयों को दो महाकाव्यों रामायण और महाभारत से हमेशा प्रेरणा मिलती रही है।

भारत-पाकिस्तान विवाद जिस तरह से रोज नये आयाम ले रहा है, उससे यह साफ होता जा रहा है कि इसकी भूमिका काफी पहले से तैयार हो रही थी। बुरहान हानी प्रसंग को सियासी जामा पहनाकर पाकिस्तान ने इसे सुलगाया और उसी सैन्य शिविर पर हुए हमले ने इसे भभका दिया। परंतु सिंधु नदी के पानी को लेकर उठे विवाद ने इसे अब विस्फोट में बदल दिया है, जिसके दूरगामी परिणाम सामने आयेंगे।

कोझीकोड़ में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी द्वारा दिये गये भाषण की खासियत यह थी कि यह एक परिपक्व लोकतंत्र के परिपक्व प्रधानमंत्री का भाषण ध्वनित होता था। उन्होंने पाकिस्तान की जनता से गरीबी, भुखमरी, बीमारी, कुपोषण से लड़ने का आवाहन किया परंतु दिल्ली तक के सफर ने एकाएक क्या जादू कर दिया कि सिंधु नदी का पानी रोके जाने की बात जोर-शोर से उठने लगी। कोझीकोड और दिल्ली के बीच सफर में ऐसा क्या हो गया कि जो लड़ाई पहले पाकिस्तानी हुक्मरानों से होती दिखायी पड़ रही थी, उसका शिकार अब आम जनता को बनाये जाने की बात दिमाग में आने लगी? पिछले दिनों नदियों को लेकर हमारे सामान्य ज्ञान में काफी वृद्धि हुई। हमें पता लगा कि सिंधु नदी की पांच सहायक नदियां झेलम, चेनाब, रावी व्यास और सतलुज हैं। इनमें से रावी, व्यास और सतलुज भारत में ही बहती हैं। बाकी तीन पाकिस्तान जाती हैं। इनका 20 प्रतिशत पानी का इस्तेमाल हम कर सकते हैं। परंतु यह कहा जाने लगा कि हम सन् 1960 में दोनों देश के मध्य हुई संधि को एकतरफा ढंग से तोड़ दें। इससे पाकिस्तान की फसलें चौपट हो जायेंगी और वह हाहाकार मच जायेगा। जबकि इस संधि का अनुच्छेद 12 साफ कहता है कि इसमें कोई भी संशोधन दोनों देशों की सहमति के बिना नहीं हो सकता। इसके बावजूद यदि भारत एकतरफा फैसला लेकर इसे तोड़ना भी चाहता है तो वह सन् 1969 के अंतर्राष्ट्रीय संधियों से संबंधित वियना समझौते से बंधा हुआ है।

हम यहां यह भूल जाते हैं कि सिंधु नदी का उद्गम भारत में नहीं बल्कि मानसरोवर, तिब्बत में है और यह इलाका अभी चीन के कब्जे में है। दूसरा तथ्य यह है कि सिंधु नदी अपने 2880 किलोमीटर के कुल सफर का 1610 किमी पाकिस्तान में तय करते हुए अरब सागर में मिलती है। तीसरा तथ्य यह कि भारत की एकमात्र अतिरिक्त जलराशि वाली नदी ब्रह्मपुत्र का उद्गम भी चीन में है। यह सब कुछ स्थितियों को अत्यन्त डरावना स्वरूप प्रदान कर रहा है। वैसे भी तमाम लोग कहने ही लगे हैं कि तीसरा विश्वयुद्ध तो पानी के लिए ही होगा। ऐसे में हम पानी से आग क्यों लगाना चाहते हैं?

दुनिया का कोई भी धर्म या विचार पानी को लेकर संकीर्णवादी सोच नहीं रखता। हम भारतीयों को दो महाकाव्यों रामायण और महाभारत से हमेशा प्रेरणा मिलती रही है। महाभारत के भीष्म पर्व में शरशय्या पर लेटे भीष्म का शरीर घावों की वेदना से जल रहा था। उन्होंने राजाओं से कहा 'पानी चाहिए।' तमाम क्षत्रिय लोगों ने ठंडे जल से भरे घड़े भीष्म को अर्पण किये। इस भीष्म ने कहा, ''अब मैं पहले भोगे हुए किसी मानवीय भोग को स्वीकार नहीं करूंगा। इस समय मैं अर्जुन को देखना चाहता हूं।'' यह सुनकर अर्जुन उनके पास पहुंचे। हाथ जोड़ कर पूछा, ''दादाजी! मेरे लिए क्या आज्ञा है।'' भीष्म ने कहा, ''बेटा! तुम्हारे बाणों से मेरा शरीर जल रहा है। मर्म स्थानों में बड़ी पीड़ा हो रही है। मुंख सूखा जाता है। मुझे पानी दो। तुम समर्थ हो, तुम्ही मुझे विधिवत जल पिला सकते हो। अर्जुन ने, ''बहुत अच्छा'' कहकर गांडीव पर तीर चढ़ाया और भीष्म के बगल वाली जमीन पर वह बाण मारा। उसके लगते ही पृथ्वी से अमृत के समान मधुर तथा दिव्य गंध वाली निर्मल धारा निकली और भीष्म तृप्त हुए। गौर करिये अभी महाभारत का युद्ध समाप्त नहीं हुआ था। इसके बाद भीष्म युद्ध खत्म करने की सलाह देते हैं। इस युद्ध का अंत हम सभी को मालूम है। कहने का तात्पर्य यह है कि *हम एक ऐसी संस्कृति के वारिस हैं जहां पानी को कभी निजी सम्पत्ति नहीं समझा गया एवं हथियार बनाकर इस्तेमाल नहीं किया गया। यही अपेक्षा हमें आज भी स्वयं से रखना चाहिए।*

पिछले दिनों सुषमा स्वराज द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ में दिये गये भाषण की खूब तारीफ हुई। वाकई में सुनने में यह बहुत आकर्षक भी था। अपने भाषण में एक जगह उन्होंने पूछा कि आतंकवादी स्वयं हथियार नहीं बनाते, वह उन्हें कौन देता है? उनका इशारा पाकिस्तान की ओर था। परंतु हमें क्या इसे इतनी सहजता से या एकमात्र उत्तर के रूप में स्वीकार कर लेना चाहिए? पाकिस्तान जिसकी आर्थिक स्थिति किसी से छुपी नहीं है वह क्या अपने खर्च से आतंकवादियों को हथियार और सुविधाएं उपलब्ध करा सकता

है? हर्गिज नहीं। आज ही अमेरिकी सीनेट ने राष्ट्रपति ओबामा के आठ वर्षों के कार्यकाल में पहली बार उनके वीटो को रद्द कर दिया। गौरतलब है कि यह वीटो उन्होंने उस विधेयक पर किया था, जिसमें 9/11 के हमले के लिए सऊदी अरब सरकार को दोषी मानते हुए उससे मुआवजे का अधिकार दिया गया था। *क्या हमें अब भी समझ में नहीं आ रहा है कि उग्र व संकीर्णतावादी वहाबी पंथ पर आधारित यह घिनौना खेल कौन खेल रहा है। पाकिस्तान तो एक माध्यम भर है। हमें अपनी वैश्विक आवाज को और स्पष्टता देने की आवश्यकता है। क्या संयुक्त राष्ट्र संघ के भाषण में उन देशों का नाम सुषमा स्वराज को नहीं लेना चाहिए तो आतंकवाद को धन प्रदान करते हैं?* संयुक्त राष्ट्र संघ के बाद दुनिया का सबसे बड़ा संगठन गुट निरपेक्ष आंदोलन है, जिसके 120 सदस्य हैं। बांग्लादेश युद्ध में हम इसका प्रभाव देख भी चुके हैं। परंतु हमने तो अमेरिका का दामन थाम लिया है। अब हमें पाकिस्तान के अलावा सिर्फ अमेरिका दिखता है, जिने आज तक उरी हमले के लिए पाकिस्तान को सीधे तौर पर दोषी नहीं ठहराया है।

वह सारे लोग जो 18 फौजियों के मारे जाने से वाजिब तौर पर विचलित हैं, सरकार से मांग क्यों नहीं करते कि कश्मीर व अन्य समस्याओं का कोई स्थाई हल निकाले। अफगानिस्तान में 15 वर्ष लड़ने के बाद अमेरिका वहां से निकलने के लिए छटपटा रहा है। इराक से निकला तो आई एस या दाइश को मौका मिल गया। युद्ध से उसके हाथ क्या आया? सोचना चाहिए कि आई एस. द्वारा निकाला गया कच्चा तेल आखिर बिका तो इसी पृथ्वी पर है। उसे किसने किसके माध्यम से खरीदा है, यह सभी जानते हैं। *आवश्यकता इस बात की है कि जिन देशों से आतंकवादियों को धन मिला रहा है और जिनसे हथियार मिल रहे हैं, उनके नाम अगर कोई और देश नहीं लेता है तो हमें सं. रा. संघ में लेना चाहिए और परिणामों के लिए तैयार रहना चाहिए। यह कदम अंततः मानवता को बचाने वाला ही सिद्ध होगा।* हमें ध्यान देना होगा कि भारतीय विदेश नीति पाकिस्तान केन्द्रित होकर न रह जाये। जैसा कि अभी प्रतीत हो रहा है।

कबीर कहते हैं—

ऐसी बानी बोलिये, मन का आपा खोय,
औरन को सीतल करे, आपुहि सीतल होय।

अभी भी समय है हमें अपने पर संयम रखकर पूरी समस्या पर गहराई से विचार करना चाहिए। हम जैसे ही दूसरों के लिए दरवाजे बंद करते हैं कहीं न कहीं वह हमारे लिए भी बंद हो जाते हैं। भारत के सामने कई बार इससे भी विकट परिस्थितियां आयी हैं और हमने उनको निपटाया है। हम आज अपनी अर्थव्यवस्था को लेकर बहुत खुश नहीं हैं लेकिन जब हम पाकिस्तान से तुलना करेंगे तो हमें बेहद संतोष होता है। इसकी वजह है कि हमने आक्रामकता को काबू में रखा है। क्या इससे अधिक कुछ और कहा और समझा जा सकता है। अनुपम मिश्र ने लिखा है—*''कोई भी पतन, गड्ढा इतना गहरा नहीं होता, जिसमें गिरे हुए को स्नेह से उठाया न जा सके''*—एक कविता में कुछ ऐसा ही मन्ना (भवानी प्रसाद मिश्र) ने लिखा था।''

हम भी उस कविता को पढ़ें। ❑

सर्व सेवा संघ का 85वां अधिवेशन चम्पारण में

सर्व सेवा संघ (अ. भा. सर्वोदय मंडल) का 85वां अधिवेशन 25 मार्च, 2017 (शनिवार) को *सुबह 10 बजे बापूधाम मोतीहारी (बिहार)* में होगा।

अधिवेशन के विचारणीय विषय

1. दिवंगतों को श्रद्धांजलि
2. दिल्ली अधिवेशन के कार्यवाही की पुष्टि
3. महामंत्री की रिपोर्ट
4. अध्यक्ष की अनुमति से अन्य विषय
5. सर्व सेवासंघ के अगले अध्यक्ष का निर्वाचन

कैसे पहुंचे : देश के अनेक भागों से 'बापूधाम मोतीहारी (रेलवे कोड-BMKI) की सीधी गाड़ियां हैं।

यहां से मुजफ्फरपुर 83 किमी है। मुजफ्फरपुर के लिए राजधानी एक्सप्रेस सहित अनेक गाड़ियां उपलब्ध हैं। मुजफ्फरपुर से मोतीहारी के लिए अनेक गाड़ियां तथा बस उपलब्ध हैं। पटना से मोतीहारी की दूरी 155 किमी है। यहां से भी आधे घंटे के अंतराल पर बसें मिलती रहती हैं।

नोट :

1. अपने पहुंचने की निश्चित जानकारी सर्व सेवा संघ, प्रधान कार्यालय, महादेव भाई भवन, सेवाग्राम-442102, वर्धा (महाराष्ट्र), फोन नं. 07152-284061 एवं 284091, ई-मेल : sarvasevasangha@hotmail.com पर अवश्य दें, ताकि तद्नुसार व्यवस्था की जा सके।
2. ओढ़ने-बिछाने के कपड़े अपने साथ लायें।
3. अधिवेशन होली के थोड़े समय के बाद हो रहा है। अतः अंतिम समय की परेशानी से बचने के लिए अपना रेल आरक्षण तुरंत करवा लें।

विशेष सूचना : *23 एवं 24 मार्च 2017 (गुरुवार-शुक्रवार) को 'चम्पारण सत्याग्रह शताब्दी सम्मेलन'* तथा *दोपहर बाद 24 मार्च, 2016 को इसी स्थान पर सर्व सेवा संघ राष्ट्रीय कार्यसमिति* की बैठक होगी। **–शेख हुसेन,** महामंत्री

गतिविधियां एवं समाचार

भूदान-ग्रामदान को जमीन पर उतारने के लिए सत्याग्रह चाहिए

भुवनेश्वर (ओडिशा) में विनोबा के 34वीं पुण्य-तिथि 15 नवंबर के अवसर पर सर्व सेवा संघ के ट्रस्टी मंडल के सदस्य एवं वरिष्ठ गांधीवादी डॉ. रामजी सिंह ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि भूदान ग्रामदान अभियान को सही रूप में जमीन पर उतारना समाजसेवियों द्वारा सत्याग्रह से ही सम्भव होगा।

इस अवसर पर सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष भाई महादेव विद्रोही ने कहा कि सर्व सेवा संघ एवं सर्वोदय कार्यकर्ताओं का यह कर्तव्य है कि हम अपनी गतिविधियों को पूरे देश में फैलायें। उन्होंने इस संबंध में पिछले दिनों वर्धा में भूदान संगोष्ठी की चर्चा करते हुए बताया कि संगोष्ठी में विभिन्न राज्यों के भूदान कार्यकर्ता, सरकार के प्रतिनिधियों का सम्मिलित होना एक सकारात्मक पहल है। उन्होंने राज्यों से अपील की कि जैसाकि विनोबा भावे ने 1976 में सभी राज्यों में भूदान कमेटी को सर्व सेवा संघ की सहमति से गठित करने की बात दोहरायी थी, उसपर राज्य सरकार को अमल करना चाहिए। अध्यक्ष ने उच्चतम न्यायालय के एक निर्णय का हवाला देते हुए बताया कि भूदान की जमीन देने के लिए जो दिशा-निर्देश दिया है, उसका पालन किया जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि भूदान की जमीन में गुजरात और बिहार में बहुत तरह की गड़बड़ियां हुई हैं।

सर्वोदय के प्रख्यात कार्यकत्री पद्मश्री तुलसी मुंडा ने अपने उद्घाटन भाषण में ग्रामसभाओं एवं भूदान ग्राम को सक्रिय करने तथा सामाजिक परिवर्तन के लिए युवाशक्ति की आवश्यकता बतलायी।

ओडिशा भूदान समिति के पूर्व अध्यक्ष रामरंजन बलियार सिंह ने मुख्य अतिथि के रूप में भूदान के कार्य को एक पवित्र कार्य की संज्ञा देते हुए कहा कि मैं राज्य के राजस्व मंत्री से मिलकर भूदान यज्ञ के कार्य को प्रभावकारी रूप से संचालन के लिए निवेदन करूंगा।

इस अवसर पर सर्वोदयी कार्यकर्ता एवं प्राकृतिक चिकित्सक डॉ. गौरांग चरण राउत ने गांधी-विनोबा-जयप्रकाश के सत्य-प्रेम और करुणा पर आधारित समाज के निर्माण पर बल दिया।

आदित्य पटनायक ने अपने अध्यक्षीय भाषण में भूदान-सर्वोदय कार्यों में अपने अनुभव को बतलाते हुए युवा पीढ़ी से सत्य-अहिंसा पर आधारित समाज के निर्माण की अपील की।

इस कार्यक्रम के आयोजक एवं भूदान ग्रामदान समिति के संयोजक गौरांगचन्द्र महापात्र ने स्वागत भाषण देते हुए देश के सभी सर्वोदय मंडलों एवं कार्यकर्ताओं से अपील की कि वे भूदान कार्यक्रम पर अपनी नजर रखें तथा भूदान लाभार्थियों को हर तरह मदद पहुंचायें। **–गौरांगचन्द्र महापात्र**

चम्पारण सत्याग्रह सम्मेलन व सर्व सेवा संघ के 85वें अधिवेशन की तैयारी शुरू

जिला सर्वोदय मंडल एवं राज्य सर्वोदय मंडल ने अपनी आयोजित बैठकों में सर्व सेवा संघ के राष्ट्रीय अधिवेशन का प्रस्ताव पारित किया, जिसपर महाराष्ट्र के पुणे में आयोजित सर्व सेवा संघ राष्ट्रीय कार्यकारिणी ने (बैठक 17-18 दिसंबर, 2016) इस अधिवेशन के आयोजन के प्रस्ताव पर मुहर लगा दी।

चम्पारण सत्याग्रह शताब्दी वर्ष में आयोजित हो रहे इस अधिवेशन की संभावनाओं की तलाश करने के लिए सर्व सेवा संघ के मंत्री विजय कुमार, मुजफ्फरपुर से आये रमण कुमार की उपस्थिति में विचार-विमर्श किया गया। बैठक की अध्यक्षता गांधी संग्रहालय के सचिव, सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष एवं पूर्व मंत्री ब्रजकिशोर सिंह ने की। प्रो. नसीम अहमद ने गांधी की याद तरोताजा करने के कई सुझाव दिये। शिक्षक नेता हरिचन्द्र चौधरी ने किसानों को संगठित करने की बात कही। वरीम रंगकर्मी व साहित्यकार प्रसाद रत्नेश्वर ने इस अवसर पर चम्पारण सत्याग्रह पर केन्द्रित एक अंतर्राष्ट्रीय सेमिनार करने तथा दलाईलामा सरीखे स्रोत व्यक्तित्व को बुलाने पर बल दिया। शिक्षक नेता व्यास प्रसाद सिंह ने इस आयोजन को अलख जगाने वाला बताया। सिविल सोसाइटी के अध्यक्ष भोलानाथ सिंह ने गांव-गांव व घर-घर जाकर स्वच्छता और भाईचारा फैलाने पर बल दिया।

बैठक में दिग्विजय कुमार, सुशील कुमार, डॉ. धनंजय श्रीवास्तव सियाराम सिंह, अजय सिंह, गांधी भक्त तारकेश्वर प्रसाद, डॉ. एच. एल. सिंह, वीरेन्द्र कुमार सिंह, डॉ. गोपाल प्रसाद सिंह, रवीन्द्र सिंह, अमन कुमार आदि ने भी अपने-अपने विचार रखे।

कार्यक्रम का संचालन विनय कुमार एवं धन्यवाद ज्ञापन आलोक कुमार ने की।

ज्ञातव्य है कि बिहार सर्वोदय मंडल ने सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष भाई महादेव विद्रोही से अधिवेशन एवं चम्पारण सत्याग्रह सम्मेलन मोतीहारी में आयोजित करने का अनुरोध किया था।

8 जनवरी, 2016 को सर्व सेवा संघ के महामंत्री शेख हुसेन, सर्वोदय जगत के संपादक अशोक मोती, मंत्री, विजय कुमार, रमण कुमार, रमेश पंकज एवं बिहार सर्वोदय मंडल के मंत्री मनोहर मानव सहित अन्य साथी अधिवेशन की अग्रिम तैयारी की दृष्टि मोतीहारी पहुंच रहे हैं।

–ब्रजकिशोर सिंह

अध्यात्म

मन लागो यार फकीरी में

❑ **किशनगिरि गोस्वामी**

(1)

एक बादशाह ने एक फकीर से पूछा—क्या तुझे कभी हमारी याद आती है?

फकीर बोला—हां, उस वक्त आती है, जब मैं खुदा को भूल जाता हूं। जिसको वह अपने दरवाजे से भगा देता है, वह मारा-मारा फिरता है और जिसको वह बुला लेता है, उसे किसी के दरवाजे पर जाने की जरूरत नहीं होती।

उसे समन्दर की लहरों का क्या खौफ,
जिसका खेवनहार खुद खुदा ही बन बैठा है।

(2)

विश्व विजय पर निकला सिकन्दर यूनान से भारत पहुंच कर एक जंगल से गुजर रहा था, तभी एक साधु शिला पर लेटा हुआ मिला। सिकन्दर को देखकर भी वह उसी तरह लेटा रहा। सिकन्दर ने गुस्से में कहा—तुमको मालूम नहीं कि तुम्हारे सामने महान विश्व-विजेता खड़ा है?

साधु तब भी निश्चिन्त होकर बोला—तुम इतना खून-खराबा क्यों करते हो?

सिकन्दर ने कहा—इससे मैं पूरी दुनिया को जीतकर उसपर राज्य करूंगा।

साधु ने पूछा—फिर?

सिकन्दर बोला—मेरे पास महल, अकूत सम्पत्ति, गहने, नौकर-चाकर, विराट सत्ता और विशाल साम्राज्य होगा।

साधु बोला—फिर?

सिकन्दर ने कहा—ये करने के बाद मैं सुकून से रहूंगा।

साधु बोला—तुम इतना सब करने के बाद आराम से रहोगे, जबकि मैं तो ये सब किये बिना ही बड़े आराम से रह रहा हूं। इतना ही नहीं, इस धरती पर जीवन के अंत में जितनी जमीन हमें मिलेगी, उतनी ही तुम्हें भी। साधु ने लेटे-लेटे ही उत्तर दिया और दूसरी करवट लेकर सो गया।

तब सिकन्दर को पहली बार अहसास हुआ कि वह एक गलत अभियान पर निकला है। कहते हैं, उस दिन से उसने अपना अभियान खत्म कर दिया। वह समझ चुका था कि सुकून और आराम पाने का उसका रास्ता सही नहीं था।

संतन को सीकरी सों काम?
आवत-जावत पन्हिया टूटी,
बिसर गयो हरिनाम,
जाकों मुख देखे घिन उपजत,
ताको कारणो पड़यो प्रणाम।

(3)

एक फकीर पैदल चलता हुआ काफिले के साथ शहर से बाहर निकला। उसके पास कुछ भी नहीं था, लेकिन वह मस्त था। एक धनवान ऊंट सवार ने उससे पूछा—तू फकीर है, तो भी इतना अकड़ कर कैसे चलता है?

फकीर बोला—न तो मैं ऊंट पर सवार हूं और न ही ऊंट की तरह लदा हुआ हूं। न तो मैं रैयत का मालिक हूं और न बादशाह का गुलाम। मेरे पास जो है, उसकी फिक्र नहीं और जो नहीं है, उसका गम नहीं। चैन की सांस लेता हूं और आराम से जीता हूं।

फकीर की बात सुनकर धनी युवक बोला—लौट जा, वरना रेगिस्तान की मुसीबतों में मर जायेगा। फकीर हँसा और चलता रहा। एक दिन न जाने कहां गायाब हो गया। कुछ दिन बाद अचानक फकीर काफिले के सामने आया और उस युवक को न पाकर उसके बारे में दरयाफ्त करने लगा। काफिले के लोगों ने बताया कि वह तो रास्ते में मर गया। फकीर ने उदास होकर कहा—मैं तो पैदल भी मुसीबतों से नहीं मरा और वह उतने अच्छे ऊंट पर बैठे-बैठे मर गया। फकीरों के अपने अंदाज हैं।

खुदा का फज्ल हासिल हो,
तो फिर ऐसा भी होता है।
हवाओं को, चरागों की,
हिफाजत करनी पड़ती है।

(4)

एक नेक आदमी ने देखा कि बादशाह तो जन्नत में बैठा है और फकीर दोज़ख में। उसने पूछा—इस बादशाह ने ऐसा कौन-सा काम किया है, जो यह जन्नत में बैठा है और फकीर ने क्या बुरा किया, जो नरक में आया?

फरिश्ते ने कहा—यह बादशाह तो फकीरों में अकीदत (श्रद्धा) रखने के कारण जन्नत में आया है और यह फकीर बादशाहों की संगत के कारण दोज़ख में पहुंचा है।

ये तेरी कमली, गूदड़ी, गेरुआ वस्त्र, जटा-जूट कुछ काम नहीं आयेगा, अगर तू बुरे कामों से बचकर नहीं रहेगा। तुझे दिखाने के लिए, उकीरों की टोपी ओढ़ने, तिलक-छापा लगाने की कोई जरूरत नहीं है। नेक काम कर। फकीरों की तरह रहकर चाहे तांतरी टोपी (अमीरों की बहुमूल्य टोपी) या मुकुट पहन लेने पर भी ईश्वर-अल्लाह तुझपर मेहरबान ही रहेगा। खुदा परस्त दिखने से बेहतर है, खुदा परस्त होना। ये सारी बातें बड़े-बड़े दानिशदारों ने कही है—जिसे हमारे पूर्वजों ने और हमने सुनी है।

अफर आदमी उसको न जानिएगा,
वो हो कैसा ही साहिबे-फहमो-जका।
जिसे ऐस में यादे खुदा न रहा,
जिसे तैश में खौफे खुदा न रहा। ❑

कविताएं

विदा होते पिता

❑ राजकिशोर राजन

रोते-कलपते सभी को छोड़
जब विदा हो रहे थे पिता
पिता नहीं थे वो

घर के लोग सिर्फ मानते थे
अगल-बगल के लोग, सब जानते थे

पता नहीं वह सिलसिला
कब हो गया शुरू
कि पत्नी दबी जुबान से उचाने लगी
कि अब 'बुढ़ऊ' की
लुप्त हो रही है स्मृति
जब कोठरी में नहीं रहते तो
बढ़ जाती है बेचैनी

घर का हरेक काम
सम्हाल लिया है मझला
और आंखों के कोर से
एक-दो बूंद अश्रुजल लुढ़कता है
पति के लिए

पिता, पता नहीं कब अलग हो गए
अपने दुःख को लेकर
जहां सभी के अपने-अपने दुःख थे
जैसे कि, आदमी जीता है
सैकड़ों सुखों में से
एक दुःख को छांटकर
ऊसी को, जीवन भर बांचकर

एक दिन, टूट गया था पिता का
अन्न के साथ वह मधुरतम संबंध भी
जब उसे चबाने के बाद
वह उतर जाता देह में रस बनकर

रस का बनना स्थगित हो गया था अब
प्रिय मित्र वह अन्न भी
घुन की तरह खाने लगा था उन्हीं को

अपनी पल-पल की पराजय से
कम नहीं लड़े थे पिता
क्षुब्ध होते रहे जब तक कि
स्वयं उनके अपनों ने ही धकियाकर
उन्हें किनारे न कर दिया
उस दिन जब बड़ी पतोहु भी
सिर से घुंघट उठा
उनके सामने ही चली गयी बाजार
अनुभवी पिता ने भांप लिया था
कैसे लुढ़कता है आदमी, वहीं
जहां से वह चढ़ता है कभी

दारूण दुःख का समय था
जब विदा हो रहे थे पिता
उस दिन, पिता नहीं थे वो। ❑

बसंत आयेगा

❑ नीलम मैदीरत्ता 'गुँचा'

सुनो! सारे दरवाजे बंद कर दो
सारी खिड़कियां भी
चिटकनी ठीक से लगाना
और बाहर एक बोर्ड भी लगा दो
कि यहां कोई नहीं रहता।
जब पता है कि द्वार खुलेगा नहीं
फिर भी लोग खटखटाते क्यों हैं?
और हां! एक कब्र भी खोदो
तुम्हें छिपना होगा
कोई भरोसा नहीं
ये दरवाजे तोड़ कर भीतर आ जाये
हां हां! मैंने सहेज लिया है
तेरी यादों की गठरी को
सो जाओ तुम
बस निश्चिन्त हो सो जाओ
बहुत थक गयी हो तुम
नींद...आएगी...बाबा...आ जायेगी
कहो तो मैं सुला दूं, कोई लोरी सुना दूं
या थपथपा दूं
क्या कहा?...वो पीले फूल?
हम्म! उम्र बीत गयी
अब भी उस का नाम लेते हुए
तेरे लब कांपने लगते हैं
बसंत आयेगा...बसंत जरूर आएगा
अभी शीत है, फिर पतझड़
और...फिर आएगा बसंत
अब ये ना कहना, कि कैसे आएगा?
सारे द्वार तो बंद हैं?
जैसे ये प्रकाश आता झिरियों से
ऐसे ही आएगा,
बसंत भी ऐसे ही आएगा...
सो जाओ तुम!! ❑

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा प्रिन्टेक, इंडियन प्रेस कॉलोनी, मलदहिया, वाराणसी से मुद्रित। प्रधान संपादक : बिमल कुमार / संपादक : अशोक मोती।